॥ वन्दे वीरम् ॥

श्री शिवचरनलाल जैन ग्रन्थमाला: १—

वारांग—चरित्र



श्री कविवर कमल नयन

१६३६

❀ ॐ ❀

श्री शिवचरणलाल जैन ग्रंथमाला का प्रथम ग्रन्थ-रत्न।

श्री कविवर कमल नयन विरचित

वारांग--चारित्र



सम्पादक:—

श्री कामता प्रसाद जैन, एम० आर० ए० एस०

ऑनरेरी मजिस्ट्रेट, अलीगंज।

प्रकाशक:—

श्री जैन साहित्य समिति, जसवंत नगर (इटावा)

(श्री शिवचरणलाल जैन ट्रस्ट की छत्र छाया में स्थापित)

प्रथम संस्करण १०००	१९३९ ई०	मूल्य

सुदर्शनलाल जैन रेवतीलाल अग्निहोत्री के सुदर्शन प्रेस एटा में
पं० रेवतीलाल अग्निहोत्री के प्रबन्ध से छपी।

प्रेमोपहार !

श्रीयुत   की सेवा में

सप्रेम समर्पित ।

प्रेषक,

श्री शिवचरण लाल जैन ग्रंथमाला का प्रथम ग्रंथ-रत्न



स्वर्गीय श्रीमान ला० शिवचरणलाल जी जैन रईस

जसवंत नगर (इटावा)

प्रस्तावना

"श्री शिवचरणलाल जैन ग्रन्थमाला" के इस प्रथम ग्रन्थ-रत्न 'वाराङ्ग चरित्र' को पाठकों के हाथों में देते हुये हमें हर्ष है। हर्ष इसलिये है कि इस ग्रन्थ-प्रकाशन द्वारा जैन साहित्योद्धार-कार्य में एक संस्था का और पदार्पण हो रहा है। जैन साहित्य समिति' जसवन्तनगर, श्री शिवचरणलाल जैन ट्रस्ट के आधीन जैन साहित्योद्धार का पुनीत कार्य करने के लिये अग्रसर हुई है, यह जान कर किसे न हर्ष होगा ? शासनदेव उसे सफल बनावें यही भावना है। इस ग्रन्थमाला द्वारा उस महान् आत्मा का पवित्र स्मृति सदैव सजीव रहेगी जिन्होंने अपना 'सर्वस्व' ज्ञान-प्रसार के लिये ही अर्पण कर दिया था। उन्हीं की समुदार-त्याग-वृत्ति का शुभ परिणाम—

'श्री शिवचरणलाल जैन ट्रस्ट'

का अस्तित्व है। श्रीमान् दानवीर ला० शिवचरणलालजी बुढ़ेलवाल दिगम्बर जैन समाज के नर-रत्न थे। जिला इटावा के जसवन्तनगर नामक स्थान में उनका जन्म श्रावण शुक्ला ८ सं० १६५० को हुआ था। उनके पिता श्री ला० भजनलालजी मोदी एक सफल व्यापारी और योग्य जमींदार थे। सं० १९५७ में उन्होंने जिनेन्द्र भगवान की विशेष पूजा कराके रथयात्रा निकलवाई। उसी समय अनायास सामायिक करते हुये उनका स्वर्गवास हो गया। श्री शिवचरणलालजी का पालन-पोषण और शिक्षादीक्षा उनकी चतुर माताजी एवं चाचा श्री मगनीरामजी के संरक्षण में योग्य रीति से सम्पन्न हुआ। श्री शिवचरणलालजी ने उस समय के धनिक वर्ग के बालकों की तरह हिन्दी-उर्दू का पर्याप्त ज्ञान संचय किया था, परन्तु अपनी ज्ञानपिपासा को शमन करने के लिये उन्होंने स्वतः ही अंग्रेजी भाषा का भी व्यवहारिक बोध प्राप्त कर लिया था। धर्मशास्त्रों का स्वाध्याय सन्त-महात्माओं की संगति और तीर्थयात्रा करने में उनको बड़ा रस आता था। यद्यपि उनके दो विवाह हुये, परन्तु विधि का रोष उनके प्रति घटा नहीं-श्री शिवचरणलाल जी के कोई सन्तान नहीं हुई। कर्म सिद्धान्त के मर्मज्ञ होने के कारण उन्होंने इसका खेद नहीं माना। वह महान् थे-उनका दृष्टिकोण विशाल था। उन्होंने निश्चय कर लिया कि अपनी सम्पत्ति जैन सिद्धान्त ग्रन्थों के उद्धार और जैन समाज के तीव्र बुद्धि असमर्थ बालक-बालिकाओं के मध्य ज्ञान-प्रचार करने के कार्य में व्यय करूंगा। तदनुसार उन्होंने ता० ९-११-१९३८ को एक वसीयतनामा लिख कर अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति उपरोक्त धर्मकार्यों के हेतु दान करदी; जिसके अनुसार 'श्री शिवचरणलाल जैन ट्रस्ट' स्थापित किया गया और उसके द्वारा उपर्युक्त दोनों धर्म कार्य सम्पन्न

किये जा रहे हैं। लालाजी का निधन ता० ८ दिसम्बर १९३५ को असमय में ही हुआ था। जैन समाज में ही वह सम्माननीय दृष्टि से देखे जाते हों, यह बात नहीं, बल्कि वह राज्यमान्य और लोक हितैषी श्रीमान् थे। उनके निधन पर भा० दि० जैन परिषद्, घी मर्चेन्ट एसोसियेशन आदि संस्थाओं ने शोक प्रगट किया था। उनका विशद जीवन चरित्र 'ट्रस्ट' की रिपोर्ट मंगवा कर पाठकगण पढ़ें।

उपर्युक्त ट्रस्ट की छत्रछाया में ही "जैन साहित्य समिति" (Jain Literature Society) नामक संस्था की स्थापना की गई है, जिसके सात सदस्य हैं और जिसके द्वारा 'श्री शिवचरणलाल जैन ग्रन्थमाला'-'जैन उपहार-सीरीज' (Jain Gift Series) और 'जैन रिसर्च सीरीज' का प्रकाशन करना निश्चित है। ग्रन्थमाला में समिति-सदस्यों की सम्मतिपूर्वक श्री हरिषेणकृत 'बृहद् कथाकोष" प्रकाशित किया जाना स्वीकृत हो चुका है और उसका सम्पादन-कार्य श्रीमान् प्रो० डॉ० ए० एन० उपाध्याय कोल्हापुर कर रहे हैं। किन्तु इस ग्रन्थ के प्रकाशन में अधिक विलम्ब देख कर हमने अन्य ट्रस्टिओं का परामर्श प्राप्त करके दातार महोदय के सजातीय कवि कमलनयन द्वारा हिन्दी भाषा के छन्दों में रचा हुआ 'वाराङ्ग चरित्र' प्रकाशित करना उचित समझा। तदनुसार यह ग्रन्थ प्रकाशित करके उपर्युक्त ग्रन्थमाला प्रारम्भ की गई है। आशा है, पाठकगण हमारे इस प्रयासको पसंद करेंगे और दातार के पुण्यकार्य का आदर्श एवं महत्व समझेंगे। "जैन उपहार सीरीज" में अंग्रेजी भाषा में "भ० महावीर के प्रवचन" प्रकाशित किये जा चुके हैं। 'रिसर्च सीरीज' का आरम्भ भी "बुंदेलखण्ड जैन इतिहास" से किया जायगा।

सम्पादन

प्रस्तुत ग्रन्थ को हम जिस रूप में चाहते थे उस रूप में सम्पादित नहीं कर सके हैं। इसमें मुख्य कारण मूल ग्रन्थ की एक के सिवा और दूसरी प्रति का न मिलना है। एक अन्य प्रति का पता हमें मैनपुरी के लोहाई मंदिर के शास्त्र भण्डार में चला अवश्य; परन्तु प्रयत्न करने पर भी हमें वह प्राप्त नहीं हो सकी। इसलिए हठात् हमें जसवन्तनगर के जैन मंदिर की एक प्रति पर से ही इस ग्रन्थ को सम्पादित करना पड़ा। यह प्रति बिलकुल शुद्ध लिखी हुई नहीं थी। कहीं पर अर्थ लुप्त था तो कहीं पर कोई पद ही छोड़ दिया गया था। हमने यथाशक्ति इन त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न किया है; परन्तु फिर भी हम उसको पूर्णतः शुद्ध नहीं कर सके हैं। इस अनिवार्य त्रुटि के लिये हमें खेद है। साथ ही हमें इस बात का भी दुख है कि उसका प्रूफ-संशोधन भी ठीक नहीं हो सका। प्रेस ने स्वतः ही प्रूफ-संशोधन का भार जल्दी छापने के लिये अपने पर ले लिया था। फिर भी यह ग्रंथ जिस आकार-प्रकार में प्रकट हो रहा है वह नितान्त असंतोषजनक नहीं है। आबाल वृद्ध वनिता इस शास्त्र का स्वाध्याय सुगमता-से कर सकें, इसीलिये इसे बड़े

टाइप में छपाया गया है। शब्दों को भी प्रायः उसी रूप में लिखा गया है जैसे वह मूल प्रति में थे। यह हम लिख चुके हैं कि मूल प्रति जसवन्तनगर के दि० जैन शास्त्र भण्डार से ली गई थी; जिसके पत्रों का आकार १२॥×७ इंच है। उसमें कुल ६७ पत्रा हैं और प्रत्येक पत्र में ११ पंक्तियां हैं। अन्तिम प्रशस्ति से प्रगट है कि वह सम्वत् १९६६ को लिखी गई थी !

ग्रंथ की कथा।

'वाराङ्ग चरित्र' की प्रसिद्धि जैन कथा-साहित्य में काफी है। उसकी रचना प्राकृत-संस्कृत-हिन्दी और कनड़ी भाषाओं में की गई है। इस चरित्र में हरिवंश में उत्पन्न हुये वाराङ्ग कुमार की जीवनी लिखी गई है। वह तीर्थङ्कर अरिष्ट नेमि और नारायण कृष्ण के समकालीन थे। उनके पिता धर्मसेन ने उन्हें युवराज पद दिया। उनकी विमाता के लिये यह असह्य हुआ। अपने पुत्र सुषेण को उन्होंने उकसाया। सुषेण ने सुबुद्धि मंत्री की सहायता से वाराङ्ग कुमार के विरुद्ध षड़यंत्र रचा। मन्त्री जाहिर—जहूर में वाराङ्ग का हितू रहा, परन्तु वह रहता इस ताक में था कि मौका पाकर उसे मार्ग में से कैसे हटाऊं ? उसने दो घोड़ों को खास तरह तैयार कराया और नुमाइश लगाकर वाराङ्गकुमार को उन्हें दिखाया। वाराङ्ग जिस घोड़े पर सवार हुआ उसे सब बातें उलटी सिखाई थीं। इस लिए वाराङ्ग के रोकने पर वह उल्टा उसे लिये भागा चला गया। घोड़े ने वाराङ्गकुमार को एक गहन वन में जा पटका। वह बेचारे वन में अनेक घटनाओं का सामना करते हुये रुलते फिरे। एक दफा सागरबुद्धि वणिक की रक्षा उन्होंने भीलों के आक्रमण से की और उनके साथ वह ललितपुर आये। वहाँ वह 'कश्चिद्भट' के नाम से एक विशेष काल तक बने रहे। ललितपुर के राजा पर जब किसी शत्रुने आक्रमण किया तो वाराङ्ग ने उसे मार भगाया। वह वणिकों के नायक हो गए। आखिर उनका व्यक्तित्व प्रगट होगया और वह खुशी से अपने पितृ गृह को वापिस चले गये। खोये हुए राजकुमार को पाकर सब ही प्रसन्न हुए। उन्होंने पितृ राज्य का अपने भाई सुषेण को दे दिया और पिता की आज्ञा लेकर उन्होंने अपने भुज-विक्रम से नूतन राज्य की स्थापना की। इस नूतन—राज्य की राजधानी आनर्तपुर थी,*जहाँ रहकर वाराङ्गकुमार अपनी रानियों के साथ खूब भोग भोगते और न्यायपूर्वक शासन करते थे। एक दफा उन्होंने तेल निवट जाने के कारण दीपक का बुझता देखकर जीवन की क्षणभंगुरता का अनुभव किया। वह वैरागी हुये और राज्य का

*प्राचीनकाल में उत्तरीय गुजरात की राजधानी का नाम आनर्त्तपुर था। गुजरात का वर्तमान बड़नगर (सिद्धपुर से दक्षिण-पूर्व ७० मील) नामक स्थान ही आनर्त्तपुर बताया जाता है। क्या वारांग की राजधानी यही थी ?

भार अपने पुत्र पर छोड़कर वह गणधर वरदत्त के पास जाकर मुनि हो गए। मुनि होकर उन्होंने खूब तप तपा और परम मोक्ष सुख को पाया। अन्य जैन कथाओं के समान इस कथा में भी मानवों के लिये उपयोगी शिक्षा दी गई है—खास बात यह दर्शाई है कि मनुष्य अपने किये हुए अच्छे बुरे कर्मों का फल पाने से बच नहीं सकता, इस लिये उसे साहसी बनकर जीवन-युद्ध में अग्रसर होना चाहिये-यदि वह सद् पुरुषार्थ करेगा तो बाह्य ऐश्वर्य ही क्या, मोक्षपद भी पा लेगा! मानव को कर्तव्य परायण बनाने के लिये यह कथा अपूर्व है।

श्री जटासिंहनन्द्याचार्य

जी का रचा हुआ 'वाराङ्ग चरित्र' जैन साहित्य में इस कथा का वर्णन करने वाला सर्व प्राचीन ग्रंथ है। बम्बई की प्रसिद्ध "सेठ माणिकचन्द दि० जैन ग्रंथमाला" में वह गत वर्ष प्रकाशित हो चुका है। संस्कृत भाषा का वह एक सुन्दर महा काव्य है। उसी के अनुरूप उपरान्त अन्य 'वाराङ्ग चरित्र' रचे गये थे।

भट्टारक वर्द्धमान जी

ने भी संस्कृत भाषा में एक 'वाराङ्ग-चरित्र' रचा था, जिसके १३ परिच्छेद हैं और जो मराठी अर्थ सहित पं० जिनदास द्वारा शोलापुर से प्रकाशित हो चुका है। कविवर कमलनयन जी ने इसी ग्रंथ के आधार से अपना ग्रंथ रचा है-उसे हम संस्कृत ग्रंथ का स्वतंत्र पद्यानुवाद कह सकते हैं।

कनड़ी भाषा में भी

एक 'वाराङ्ग चरित्र' धरणी पंडित द्वारा सं० १६५० में रचा गया था। *

हिन्दी में

प्रस्तुत ग्रंथ इस कथा की सुन्दर रचना है। कवि कमलनयन जी ने अपना यह 'वाराङ्ग चरित्र' विक्रम सं० १८७७ में रचकर समाप्त किया था। कवि कमल नयन जी के रचे हुए अब तक (१) अढ़ाई द्वीपका पाठ (सं० १८६३), (२) जिन दत्त चरित्र (सं० १८७१), (३) श्री सहस्त्र नाम पाठ (सं० १८७३), (४) पंच कल्याणक पाठ (सं० १८७४) और वाराङ्ग चरित्र (सं० १८७७) नामक पांच ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं। इन ग्रंथों की प्रशस्तियों से ही कवि कमलनयनजी का कुछ जीवन-परिचय प्राप्त होता है। अन्यथा हमारे पास ऐसा कोई साधन नहीं है जिससे उनके महान् व्यक्तित्व का परिचय ज्ञात हो।

कवि कमलनयनजी

संयुक्त प्रान्त के मुख्य नगर मैनपुरी के निवासी थे। उनके समय में आज

* विशेष के लिये प्रो० उपाध्याय की भूमिका "वाराङ्ग चरित्र" (माणिकचन्द जैन ग्रंथमाला) मे देखना चाहिए।

कल की तरह मैनपुरी एक जिला नहीं था। उस समय मैनपुरी की गणना भीम ग्राम (भौगांव) के अन्तर्गत की जाती थी। कवि बताते हैं कि सूबा आगरा में कन्नौज सरकार के आधीन परगना इटावा था, जिसके अन्तर्गत भीमगांव था। उसमें राजा दलेलसिंह चौहान की राजधानी मैनपुरी थी। वहाँ जैनियों के साथ मथुरिया ब्राह्मणों की बसासत ज्यादा थी। प्रजा आनन्द पूर्वक रहती थी। उसे किसी तरह का कष्ट नहीं था। ▮ उस समय वहां जो जैनी बसते थे उनमें बुढ़ेले जैनी मुख्य थे, जिनके नेता साहु नन्दराम थे ❀। वह मैनपुरी के एक मुख्य रईस थे; इसीलिये कवि ने उनको 'पुरवासिन सिरमौर' लिखा है। ×बुढ़ेले बनियों को कवि ने यदुवंशी बताया है। उनका यह लिखना है भी ठीक, क्योंकि उनसे पहले के यंत्र आदि लेखों में भी बुढ़ेलों को जदुवंशोद्भव बताया गया है ÷। कवि ने यह भी लिखा है कि पहले यह बुढ़ेले बनिये लम्बकञ्चुक (लंबेचू) जाति के अन्तर्भूत थे। उपरान्त उस जाति में प्रचलित रीति-रिवाजों से भिन्न नये रीति-रिवाज रचने के कारण वह एक स्वाधीन जाति बना कर अलग हो गये ❁। इसी सुधार-प्रिय बुढ़ेले जाति में तब

▮ "आगरे के सूबे में चकला इटाया बसै, जाकी सिरकार कन्नौज एक जानिये। तिस ही इटाये के परगने में भीमगाव,तिसमें मैनपुरी, जहाँ राजै राजधानी पै। नृपति दलेलसिंह जाके कोई नाहि भिनि देह सदा दान दीन दुखी पहिचानिये। ताकौ राज करें नीकै पालै प्रजा शुद्धजी के बाम्हन मथुरी और बसै जैन बानिये॥
—जिनदत्त चारित्र।

नोट— भीम गाव से कवि का मतलब शायद जिला मैनपुरी की तहसील भौगांव के मुख्य नगर भौगाँव से है। मैनपुरी के निकट दूसरा कोई ऐसा ग्राम या नगर नहीं है जिसका नाम-साम्य भीम गाम से हो। आज भी लोग भौगांव को भीम गाम कहते हैं।

❀तिनहीं में नंदराम साहु सिरदार एक, दूजो धनसिंह (सुत ?) राय भाई पहिचानिये। तहाँ ही प्रसिद्ध हरिचंदराय वैद बसै,पर उपकार देत औषध प्रमानिये॥
—सहस्रनाम पाठ प्रशस्ति

×"जाति बुढ़ेले वश जदु, मैनपुरी सुखवास,
नगरावार कहावतै कास्यिप गोत सुतासु ॥१॥
"नंदराम इक साहु तहां, पुरवासिन सिरमौर।
है हरिचंद सुदास तहाँ, वैद्य क्रिया धर और ॥२॥
तिनही के सुतदोय हैं भाषे तिनके नाम।
छत्रपति दूजे कंज दृग, धरें भाव उर साम ॥३॥"—वारांग चरित्र

÷ प्राचीन जैन लेख संग्रह पृष्ठ ८२-८३

❁जाति के बुढ़ेले लंब कंचुक थे पहले, तिनमें तै ह्वै अकेले रीति-जुदी जिन ठानिया'।—जिनदत्त चरित्र प्रशस्ति

काश्यप गोत्री नगराबार साहु नन्दराम अग्रगण्य थे। इनके दादा श्री साहु शिवसुख-रायजी और पिता साहु कुन्दनदासजी थे। साहु नंदरामजी रुई के एक बड़े व्यापारी थे। उनके रुई के व्यापार की अभिवृद्धि उनके पुत्र साहु धनसिंह ने खूब ही की। यहां तक कि उनका वंश रुई के व्यापार के कारण 'रुइया' नाम से प्रसिद्ध हो गया था। अच्छा तो, इन्हीं नंदरामजी के भक्त श्रावक हरिचंदजी थे, जो वैद्य कला में प्रवीण थे। अपने आयुर्वेद-विद्या के ज्ञान द्वारा जनता का उपकार करते थे। उनके दो पुत्र (१) छत्रपति और (२) कमलनयन हुये। नंदरामजी के कुटुम्ब से हरिचंदजी और उनके पुत्रों का घनिष्ठ सम्बन्ध था। छत्रपति और कमलनयन जी उनके संसर्ग में रह कर धर्म कर्म रत रहे थे। परन्तु यह जानने के लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है कि इन भाइयों का जन्म कब हुआ था और इनकी शिक्षा-दीक्षा किस तरह हुई थी? उनका विवाह कहाँ हुआ था और समाज में उनकी क्या स्थिति थी? यही कमलनयनजी प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता हैं और इन्होंने अपने वैयक्तिक जीवन के विषय में अपनी प्रशस्तियों में कुछ नहीं लिखा है। किन्तु यह स्पष्ट है कि वह हिन्दी के अच्छे विद्वान् और एक सफल कवि थे। संस्कृत-भाषा का भी उन्हें व्यवहारिक ज्ञान था। धर्म-कर्म करने की ओर उनकी रुचि अधिक थी। वह अपनी रचनाओं का लेखकों से लिखवा कर शास्त्र भण्डारों को दान किया करते थे। सन्त पुरुषों की संगति करने में उन्हें रस आता था। जब एक दफा वह प्रयाग पहुँचे तो वहाँ के धर्मात्मा सज्जनों के सम्पर्क में वह आ गये और खूब ज्ञान गोष्टि करने लगे। उसी सत्संगति के स्मारक उनकी दो रचनायें हैं। उन्हें सद्दृष्टि नसीब थी। अध्यात्म रस के वह रसिक थे। अपनी अध्यात्म-मग्नता में उन्होंने एक दफा एक 'अध्यात्म-बसन्त' का मनोहारी चित्रण निम्नलिखित पद्य के रूप में किया:—

"जिन आतम-घट फूलो बसन्त ।
मुनि करत केलि सुख को न अंत ॥ टेक ॥
शुद्ध भूमि दरशन सुभाय,
जहाँ ज्ञान-अंग-तरु रहे छाय ॥ जिन ॥१॥
तेरह विधि चारित्र फूलो जु फूल ।
द्वादश भावनि रहीं लता झूल ॥ जिन ॥२॥
बारह-विधि तप-वन छहे चहूं ओर ।
द्वाविंसति—पंछी करत शोर ॥ जिन ॥३॥
पंचेंद्री—मृग बश करण धीर ।
आवश्यक-षट सम सखा तीर ॥ जिन ॥४॥
गावें शुभ—जिन—गुन—राग—रंग ।

जहाँ गान करत स्वर को न भंग ॥ जिन ॥५॥
जहाँ रीति-प्रीति संग सुमति नारि ।
शिवरमणि मिलन को कियो विचार ॥ जिन ॥६॥
जिन-चरण कमल चित बसो मोर
कहैं 'कमलनयन' रति-साँझ-भोर ॥ जिन ॥७॥

सच है अरण्यवासी निर्ग्रन्थ-मुनि ही साधु-चर्या में रत रह कर अध्यात्म-रस का पान करने के अधिकारी हैं। कवि ने अपने इस भाव को उपर्युक्त बसन्त-राग में खूब ही अलापा है। यह तो उनकी अध्यात्म-शीलता का एक नमूना है ! न जाने उन्होंने ऐसे कितने अमोल रत्नों को सिरजा होगा ? शायद खोज-बीन करने से और भी कुछ पता चले !

सम्भवतः कवि कमलनयनजी की सबसे पहली रचना 'अढ़ाईद्वीप का पाठ' है, जिसे उन्होंने सम्वत् १८६३ में रचा था। कातिक सुदी पंचमी को प्रारम्भ करके चैत्र बदी तेरस को उन्होंने इसे ३७७० अनुष्टप में समाप्त पदों में किया था। यह ग्रन्थ उन्होंने प्रयाग में जाकर रचा था। वहाँ पर अग्रवाल जातीय श्रावकोत्तम श्री हींगामलजी के धर्मरसी सुपुत्र श्री लालजीतजी थे। उन्हीं की प्रेरणा से कवि कमलनयनजी ने इस ग्रन्थ की रचना की थी ❀। इस समय कवि की उम्र ज्यादा नहीं तो २५-३० वर्ष की अनुमान करना बेजा नहीं है। इस गणना के अनुसार कवि कमलनयनजी का जन्म सं० १८३८ या सं० १८३३ में हुआ माना जा सकता है। युवावस्था को पहुंचते-पहुँचते वह विद्या-कला में चतुर और धर्म-कर्म के मर्मज्ञ विवेकी विद्वान् बन गये थे। साहु नंदरामजी के पुत्र साहु श्यामलालजी से कवि कमलनयनजी का साहचर्य विशेष था-वह उनके सहपाठी से प्रतीत होते हैं। 'जिनदत्त चरित्र' की रचना में साहु श्यामलाल ने कवि को संस्कृत-प्रति का यत्र-तत्र अर्थ बता कर उपकृत किया था‡। इससे उनका संस्कृतज्ञ पंडित होना सिद्ध है। मिती कार्तिक कृष्णा पंचमी संवत् १८६७ को साहु नंदरामजी के सुपुत्र साहु धनसिंह जी ने, जो साहु श्यामलालजी के ज्येष्ठ भ्राता थे, श्री सम्मेद शिखरादि तीर्थों की यात्रार्थ संघ निकाला था। इस यात्रा संघ में मैनपुरी और उसके आस पास के अनेकानेक जैनी सम्मिलित हुये थे। प्रतीत होता है कि इस समय हमारे कवि जी भी प्रयाग से लौट कर मैनपुरी आ गये थे और इस यात्रा संघ में वह भी साथ रहे थे। संभवतः उन्होंने ही साहु धनसिंह के हृदय में तीर्थयात्रा करने-कराने का पुण्यमई भाव जागृत किया था-कवि का स्वयं तीर्थयात्रा करने का चाव था। वह

❀अढ़ाई द्वीप पाठ की प्रशस्ति देखो।

‡'श्यामलाल के सहाइ, पुत्र नंदराम गाइ, अर्थ जिन दाइ बताइ, नाहि जहाँ जानिया'।
—जिनदत्त चरित्र प्रशस्ति

संघ के साथ गये और यात्रा का सारा विवरण कविता में रच डाला-- सम्मेद शिखिरजी की यात्रा का समाचार' संभवत: उन्हीं की रचना है । × उन्होंने सं० १८६८ में सम्मेद शिखिर की यात्रा से लौट कर उसे रचा था। सं० १८७१ में कवि मैनपुरी में थे और उन्होंने 'जिनदत्त चरित्र' की कवितावद्ध भाषा रची थी । सं० १८७३ में कविजी ने सहस्रनाम पाठ' की रचना प्रयागराज में अपने मित्र श्री लालजीत की इच्छानुसार रची थी। उस समय वह प्रयागरा में कारणवश जा रमे थे। सं०१८७४ में उन्होंने 'पंचकल्याणकपाठ' को रचा था। आखिर संवत १८७७ का रचा हुआ उनका प्रस्तुत ग्रंथ है। 'इस ग्रंथ को रच कर कवि कृतकार्य हुये थे'-यदि हम यह कहें तो अनुचित नहीं है। हिंदी के पुरातन कवियों का कविता रचने में यह उद्देश्य रहा है कि उनकी रचना सरल--बोध और लोकोपकारी हो। उदाहरण में तुलसीदास जी की 'रामायण' पेश की जा सकती है। हमारे कवि ने भी इस उद्देश्य को सफल बनाया है। इसीलिये हम उन्हें सफल--कवि कहते हैं--भले ही उनकी कविता बनारसी और तुलसी की कोटि की न हो। सं० १८७७ के पश्चात् कविवर कितने समय तक और जीवित रहे और उन्होंने कोई रचना रची या नहीं, यह बताने में हम असमर्थ हैं।

उपसंहार—

ग्रंथ और ग्रंथकर्त्ता का यह सामान्य परिचय प्रकट करके प्रस्तुत ग्रंथ हम पाठकों को दानवीर श्री ला० शिवचरणलालजी की पवित्र स्मृति में भेंट करते हैं । वह स्वयं इसका स्वाध्याय करें और अपने मित्रों को कराकर स्वपर कल्याण करें !

इतिशम् ।

× "जैन सिद्धान्त भास्कर" भा० ४ पृष्ट १४६--१४८ देखो

अलीगंज; विनीत—

२--९--१९३६ कामताप्रसाद जैन ।

शुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	३	अपूर्व आचार	पूर्व आचारज
५	७	नृपतिऽरु	नृपवर
८	२४	जिहाल	निहाल
२२	८	विधि ना	विधिना
२४	१८	चक्रि	चक्री
३२	२०	चिन	छिन
३७	१८	दर	दूर
५१	१२	विपरयय	विपर्य्यय
५२	१४	सरैन	सरै न
५३	७	शीलत	शीतल
५५	१२	ते थान	ते थान ॥
,,	१९	नातारु	नानरु
५७	६	दुष्ट	दुष्ट
,,	२३	दुख-दुख	सुख-दुख
५९	४	धर्मा जन	धर्मार्जन
,,	१७	एमरा । जानिज	एम । राजा निज
६१	२३	रेली	रली
६४	३	दे सब सेनि	देवसेन
६५	२०	कर-खर	करे-खरं
६६	४	परह	पटह
६९	६	नागा रूढ़	नागारूढ़
७०	४	दो ऊन	दोउन
,,	१२	तुर बनु	तुरगनु
७१	६	रहरे तुतन	रहे रेतु तन
,,	१०	भुंजगर	भुजंग
,,	१२	वे करारा	मे बेक़रारा
७२	२२	धरत निदेख	धरत तिनि देख
७४	४	सु	सु
,,	७	शये	शत्रु पै

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७७	१२	बान क्यति	बानिकपति
,,	१९	छत्र	छत्र
७८	९	भेंद न	भेदिन
७९	[illegible]	किकल्यौंत	कि कल्यौंत
८०	१६	करतुग गन	करतु गगन
८१	६	षड्गयऊ पर	षड्गय ऊपर
८८	१४	ननन	नयन
९६	१५	भागि नेय	भागिनेय
९७	५	सर दहे	सरदहे
,,	२२	मरम	परम
९८	१८	नज्र	निज
९९	१०	माभो	मानो
१०२	२०	आभूण	आभूरण
१०४	८	मुनिराय	नृपराय
१०५	१८	बहुरि लादिक	बहु रत्नादिक
११?	[illegible]	आयरण भांव	आय रणभूमि
११५	१७	हिष	हिय
१२१	८	यात्र	यात्रा
१२३	१४	बातनि	बात न
१२४	४	जल सदा पूरो	जल पूरो
,,	६	होन	चेत
१२५	७	जनित	जानत
,,	१४	मुनि	मुनि
१३०	१४	बंद	बंध
,,	२०	पंचाग्नि कायस	पंचाग्निकाय सु
१३१	२४	रलु	नक
१३४	२४	गुन	गण
१३६	८	की भी	कीनी

❀ ॐ नमः सिद्धेभ्यः। ❀

श्री वरांग चरित्र भाषा।

छप्पय—बंदौं श्री जिन चरण सदा सेवत जिन सुर नर।
बंदौ सिद्ध अनंत बासु किय लोक शिखिर घर॥
बंदौं सूरि मुनीश त्रिंश रस गुण के धारक।
बंदौं श्री उवझाय पंचविंशति गुण पारक॥
बंदौं सु साधु बसु बीस गुन धरन करन क्षय करम के।
पद पंच परम मो मन बसो दायक ये शिव सरम के॥१॥

दोहा—जिन प्रबोध दरपन विषै भासत लोकालोक।
तिन नित प्रति वन्दन करौं, दे चरननि सिर धोक॥२
जसु प्रसाद कविजन सदा रचत शास्त्र सुखकार।
बुधजन पावत हैं तथा, श्रुत सागर को पार॥३॥
मन वांछित पूरन करन-हार कही जिन जोय।
सो सरस्वति मो मन बसो, देवो मति भ्रम खोय॥४।
श्री समंतभद्रादि गुरु, मिथ्यातम क्षयकार
तिन चरणनि बन्दन करौं, होउ सुमति दातार॥५॥
इह विधि मंगल करि प्रणमि, देव शास्त्र गुरु पाँय
श्री वरांग नृप की कथा भाषा करौं बनाय॥६।
दुरजन हंसो कि थुति करो, सज्जन निज निज रीति
मेरे राग न दोष चित, निज कारज सों प्रीति॥७।

अडिल्ल—गणि मुनि कथित वरांग नृपति की जो कथा
सो मोपे किम कही जाति सो भन तथा।

मो मति अल्प निदान ज्ञान मो में नहीं ।
मति माफिक कछु बर्णनि करिहौं मैं सही ॥८॥
जो अपूर्व आचार कविमारग जागह्यो ।
मैं मति हीन यथारथ ताही विधि लह्यो ॥
ता बिच गमन करत मोकों श्रम कहा ।
ज्यों गज आगे चलत करभ वन मँग लहा ॥९॥

चौपाई-याही मध्य लोक भुय जानि । द्वीप समुद्र असंख्य बखानि ।
ता बिच जंबू द्वीप सुवासु । जंबू तरु करि संज्ञा जासु ॥१०॥
लवनोदधि जाके चहुँ फेर । बैढ्यो जिमि खाई पुर घेर ।
मध्य सुदर्शन मेरु सुजासु । दक्षिण भरत क्षेत्र है तासु ॥११॥
तहां सौम्याचल नाम गिरीन्द्र । ऊंचे शिषिर कहैं सुमुनीन्द्र ।
निकट नदी ताके बर बहै । सोम्या नाम जासु को कहै॥१२॥
ताबिच आरज खंड मनोग। छहो खंड बिच जो शुभ योग ।
तहां कांतपुर नगर सुसार । धनकनि करि गृह भरे भंडार॥१३॥
जिन गृह ऊपरि धुजा फरहरै । धूप धूम मनों बारन करै ।
जँह शोभै सुंदर जिन ग्रेह । फटिक भीति निर्मापित तेह॥१४॥
कंचन दंड धरै जह हेतु । लहके गगन पवन बस हेतु ।
पाय उतंग लसे ते एम । भविनु बुलावत है करि प्रेम ॥१५॥
जिन ग्रह बाजे बजत अपार।जिनकी धुनि श्रवननि सुखकार ।
व्यापि रहीं दशहू दिशि माँहि।जाकों सुनि भविजन हरषांहि॥१६॥
मानों सिंह गरजत विकराल।बन बिच गज मद को क्षयकार ।
तपसी बन में जहां बहु बसें। कृषशरीरद्युति धारत लसें॥१७॥
पापी जीवनि के अघ भूरि । धर्मोपदेश दे करि दुख दूरि ।
जहांनारिनु मुक्तनि उर हार ।लसत कुचनुबिच इम सुखकार॥१८॥

ग्रह गन की माला मनोजोर। लागी मेरु शिखिर की ओर।
जहां नारिनु नूपुर पग बजें। जिस रव सुनि झिल्लीगन लजें॥१९॥
निशि सोये कामी जन गेह। तिनहि जगावन हेतु सुयेह।
जिह पुरजन धन पूरित बसें। पर कारज कृत गुनजिन लसें॥२०॥
धरत परस्पर हितचित प्रीति। निज कुटुम्ब सम सब की रीति।
जहाँ बजार चौहटे सुढोर। पंकति बंत बने अधिकार॥२१॥
मणि प्रवाल मुक्ताफल लाल। बेचें सज्जन जहँ बहु माल।
सुर नारिनु सम नारी जहां। नर अमरनु सम सोहत महा॥२२॥
अखिल सम्पदा जहां भरि रही। तिस पुर शोभा जाति न कही।
तहाँ नृप भोजवंश विख्यात। प्रगट्यो धर्मसेन बर गात॥२३॥
भुज बल करि अरि जीते सर्व। नमत चरन जिस भये निगर्व।
पालैं निज परजा करि प्रेम। पितु माता सुत पाले जेम॥२४॥
सदा निरंजन राजे अंग। मानो काम देव सर वंग।
दृढ़ ब्रतधारी जिनमत माहिं। सदा चरन जिन पूज कराहिं॥२५॥
सप्त तत्त्व नव पद सरधान। जिन श्रुति गुरु तजि भजे न आन।
चारित्र भूषन भूषित देह। गुरु परिजन पालित नित एह॥२६॥
गुणदेवी मृगसेना आदि। मनोहर प्रियंकरा इत्यादि।
जिन प्रमाण भोख्यौ श्रुत साषि। तांबिच गन सत संख्या राखि॥२७
हँस गमनि मृग नयनी जानि। इस्मित बदनि गुननि की खानि।
कोकिल कंठ मधुर सुर जासु। नाभि गँभीर लसे अति तासु॥२८॥
ऐसी नारी है जिस गेह। जिनसों नृप को परम सनेह।
बसु विशंति पंचेन्द्रिय भोग। उचित करत नित नृप शुभ जोग॥२९
तिन सङ्ग रमत गमन निज काल। जानो घड़ी इक सम भूपाल।
गुन देवी है रानी जोय। पटरानी राजा की सोय॥३०॥

ता सुत जायो बहु गुण धार । नाम वरांग धरयो सुविचार ।
शुभ दिन घड़ी महूरत जानि । केन्द्र त्रिकोण परे ग्रह आनि॥३१॥
जे जे शुभ भाखैं ज्योतिषी । तिन जुत जनम लगन इन लिखी ।
कंचुकि खबरि दई जब आय, सुत उत्पत्ति राजाहि सुनाय॥३२॥
निज आभरण पहिर नृप जिते। दिये उतारि ताहि नृप तिते ।
अरु जे कारागह नर परे । छाड़े सब जय जय रव करे ॥३३॥
जाचक जननि दिये बहु दान । पुरजन गावत मंगल गान ।
मात पिता उर आनन्द धरत। पूरन सकल मनोरथ करत॥३४॥
सकल कला गुण करि संयुक्त। अवयव युत तन दोष विमुक्त।
सब परिजन बाँछित दातार। दिन दिन बाढ़त राजकुमार॥३५॥
श्रुत अभ्यास करत नित सोय। गुरु पद सेव करत अति जोय।
धर्म कुधर्म बृद्धि स्थिति हेत। शुभ कारजमें निज मति देत॥३६॥
वर विवेक सज्जनता काज । सुजन संग करतो गुन भाज ।
बिनय नीति जश करुनाधार। पर उपगार स्व पौरुष सार॥३७॥
मधुर बचन भाषन करि जबे । निज परिजन संतोषत तबे ।
इत्यादिक बहु गुण जिस माँहि। मातु पिता लखि सुख उपजाहि॥३८॥
मृगसेनादि और जे त्रिया । तिनहू के बहु सुत उपजिया ।
यौवन गुण करि कांत शरीर। फैलो जस जिमि विमल सुछीर॥३९॥
तिन में अधिक कांति धर सोय। नाम वराँग नृपति सुत जोय ।
उडुगण बिच जिमि पूनो चंद। तिम सोहत उन बिच नृपनन्द॥४०॥
नारिन मनु अधीर सो करत । कामदेव सम द्युत तन धरत ।
बाल अवस्था करि सुव्यतीत। यौवन वय गत भयो निचित्त॥४१॥
सुत मुख निरखि निरखि नृपराज। चिंता करत बिवाहन काज।
कुल सुकांति करि को सम नारि। याके मन की राखन हारि॥४२॥

होय सही मेरे मन एह। निशि दिन व्यापतु है सन्देह।
निज कुटुम्ब संग लेकरि सबे। बैठि विचार कियो मन तबे॥४३॥

अडिल्ल- निजकुल सम भूपाल विया परनाइये।
गुन पूरन शुभ रूप जासु में पाइये।
विगत दोष सौभाग्य कोष जो जानिये।
सुत वरांग तिस संग समारथ ठानिये॥४४॥

दोहा—इस विधि चिंतन करि तबे, बैठ नृपति ह सोइ।
अब विवाह बरणान करों सुनिये सो भवि लोइ॥४५॥

गीतिका छंद-सो कुमर हित मित वचन कहि,
नित सकल जन करि तोषिया।
चित प्रीति करत सुजान निरषत,
सु अङ्ग सब विधि पोषिया॥
पण्डित जननु संग करि सुजसु,
वर बोध प्रापति है भले।
सो नृपति कुल नभ चन्द पूरन,
धर्म रत नित अघ दलै॥४६॥

दोहा—पुन्य प्रतापे पाइये, रिद्धि सिद्धि सुख साज।
स्वर्ग सम्पदा पुन्य तें, पुनि शिवपुर को राज॥४७॥

इति श्री वरांग चरित्र भाषायां कृते श्री वरांग चरित्रस्य पीठिका कथन जा विषे ऐसा प्रथमः सर्गः॥१॥

——(०)——

अथ द्वितीय सर्ग ।

दोहा—चरण जुगल जिनराज के, बन्दों शीश नवाय ।
मन बच क्रम करि जोरि करि, मो मति द्यो सुखदाय।४८॥

चौपाई इक दिन एक बनिकवर आय । राज सभा बैठो ठहराय।
कहतु भयो नृपसों इम बैंन । हे प्रभु मो बच सुनु सुखदेन ॥४६॥
नाम समृद्धपुरी इक सार । ताको नृप धृतिषेन उदार ।
ज्ञान धैर्य गुणहै जिस माँहि। दलबल करि तुम सम शक नाहिं॥५०॥
तुला नाम रानी गुण धारि । राजा की राजे बर नारि ।
मधुर बचन भाषण करि तासु । भूषित बदन होत नित जासु॥५१॥
सुता भई ताके गुण धाम । गुण मनोग्य रूपा जिस नाम ।
मधुर बचन भाषण करि जोय यौवन रूप सहित तन सोय ॥५२॥
दान मान करि पोषित जननु । भूषित करत सकल जिन भवनु ।
तिन दोऊ को विवाह बर जोग । लिखो विधाता आपु नियोग ॥५३॥
जो न होय यह काज नरेश । तो विधना को विफल कलेश ।
राजा बचन सुने निज कान । बानिज के सुख देन महान ॥५४॥
गयो मंत्रिशाला उठि तबै । मन्त्री चारो ले सङ्ग जबै ।
बैठि तहाँ आसन बर पाय । मंत्री लीनों पास बुलाय ॥५५॥
करि सन्मान दान बुधिवान । पूंछत तिनसों चतुर सुजान ।
जोग विवाह वरांग कुमार । भयो अबे तन यौवन धार ॥५६॥
ज्ञान विनय पुनि जश करि सही । होय त्रिया इस सम गुन मही ।
काकी सुता कौन नृप इसो । हम समान तुम भाषो तिसो ॥५७॥
इमि सुनि मन्त्री बोलो बैन । नाम अनंत जासु है एन ।
मेरे बचन सुनो महाराज । भाषों तुमसों सारन काज ॥५८॥

ललितपुरी नगरी इक वसै । देवसैन नृप ताको लसै ।
सो वरांग को माम जानि । नंदा नाम सुता गुन खानि ॥५६
ता नृप कें राजे सुकुमारि । कुमर वरांग जोग्य सो नारि ।
यह संबंध भलो सुखदाय । कीजे यह नृप मन बच काय॥६०॥
देवसैन समधी सिर मौर । या सम हितू न दूजौ और ।
इम कहि मन्त्री चुप हो रह्यौ । नाम अनंत जासु सरदह्यौ ॥६१॥
अजित नाम मन्त्री दूसरो । मन्त्रवाद में अति चातुरो ।
कहतु भयो नृप स करि जोरि। ताकी कानि दई नित तोरि॥६२॥
हे नृप यह अयुक्त इन कहो । वह संबंध जोग है नहीं ॥
मेरे बचन सुनौं मन ल्याय । जो विचार जुत हो तुम राय॥६३॥
राजा देवसैन तुम बंधु । आगे को तासों संबंधु ॥
होय अपूर्व हितू नृप जोय । तासँग किये अधिक सुख होय॥६४॥
दूजै मंत्री के सुन बैन । तीजो बोल्यो जो चित्रसेन ॥
पहिले के बच करि परमानि। कहतु भयो उस सम सुख बानि॥६५॥
देवसेन ते को बलवंत । और दूसरो है क्षिति कंत ॥
को नरेश वाके सम आजु । सो मोसों तुम कहो प्रकासु॥६६॥
अरिजन बन संतापि जहँ रहे । जसु प्रताप दावानल दहे ॥
दान देय संतोषे दीन । किये दरिद्र तिननु के छीन ॥६७॥
ऐसो क्षितिप छोड़ि गुन कूप । और हितू न कीजिए भूप ॥
तीजे मंत्री की सुनि बानि । चौथो इम बच कहतु बखानि॥६८॥
नीति हिताहित जाननहार । स्वामि काज जिस करन विचार ॥
बहुत भंग करि कहिए कहा । इक बच सत्य सुनीजे महा॥६९॥
सावधान करि अपनो चित्त । स्वामि भक्ति जो धारत मित्त ॥
सबसों हित संबंध करेय । एक ही सों नहिं काज सरेय ॥७०॥

कीर्ति लाभ अरु कुल की वृद्धि । शत्रु नाश शुभ कारज सिद्धि ॥
पृथ्वी विजय देस निज क्षेम । बहु नृपसौं जो कीजै प्रेम॥७१॥
यह विवाह मैत्री सुखदाय । सबसों कीजे हित चित लाय ॥
मिलै सकल ताकों बर बस्त । धरमै मग्व साधिये समस्त ॥७२॥
बैरी वश अवश्य तिस होय । स्नेह करै बहु बांधव लोय ॥
लक्ष्मी थिरु होवे गृह तासु । बहुत हितू जन होवे जासु॥७३॥
जातैं एक वचन सुनि लेहु । ज्यों जिय को भाजै सन्देहु ॥
राजा और धरणिपर सही । है वसु मिति संख्या जिन कही॥७४॥
तिनि के अष्ट सुता गुन धारि । ते वरांग सुत जोग विचारि ॥
तिनि के नाम सुनों तुम राय । भेद सकल तुम देउ बताय॥७५॥
प्रथम महेन्द्रदत्त जिस नाम । वर सुविंध्यपुर है जिम ठाम ॥
वपुषमती ताके है सुता । रूप अधिक सुन्दर गुन जुता॥७६॥
द्विषट् तपोधरि नाम नरेस । दूजो सिंहपुरो सु महेस ॥
तीजी इष्टपुरी सु बखानि । पुत्री है जिष्ठमति तिस जानि॥७७॥
बसुन्धरा गुण पूरन तिया । सनत कुमार नृपति की धिया ॥
नगर मलयपुर को है ईस । मकरध्वज है नाम महीस॥७८॥
अनंत सेना सुता सु तासु । शोभेवर सुरूप वपु जासु ॥
समुद्रदत्त चक्रपुर केर । नृप तिन किय अरि जन जिन जेर॥७९॥
ताकें प्रियवृता है सुता । जिस तन लच्छन जुत अद्भुता ॥
नामगिरि बृजपुर है सार । बज्रायुध तँह नृप गुन धारि॥८०॥
सुता सुकेसी है तिस गेह । मात पिता तसु करत सनेह ॥
कोशलपुर को है भूपाल । मित्र सहित सो नाम विशाल॥८१॥
सुता विश्व सेना तसु भूप । सब तिरियनि बिच अधिक सरूप ॥
पुनि नगेसपुर को भूपाल । बिनयंधर है गुननु जिहाल॥८२॥

तसु पुत्री प्रियकारिनि नाम। ताको तन सुन्दर द्युति धाम ॥
ए आठों नृप कन्या जानि। कुमर वरांग योग्य सुख खानि॥८३॥
मो वच नीति जुक्त परमान। जो होवें तो करो सरधान॥
तुम कुसाग्र सम बुद्धि नरेश। मन विचार कीजे न अँदेस।८४॥
सुनि राजा मंत्री के बैन। मन में धारि लिये सुख दैन॥
दूत बुलाय चतुर नर जेह। दे दल बिदा किये नर तेह॥८५॥
नम्र बचन कहि दियो समुझाय। ते सब चलि पहुँचे तहां जाय॥
ते कन्या नृप है जिन ग्राम। थोड़े दिन में कियो विश्राम॥८६॥
राज सभा में करि परवेस। दिये लेख नृप करनु सुभेस॥
वर विवाह मंगल प्रस्ताव। सब ही नृपनि जानि सुभ भाव॥८७॥
ते धृतिषेण आदि सब राय। मंत्री निज निज लिये बुलाय॥
तिन विचारि करि अंगीकार। निज निज लेख लिखे तिहि वार॥८८॥
दूतनि हाथ दिये दल तबै। बिदा किये तब ही ते सबै॥
चलते दूत तहां ते सही। आये निज नृपपुर की मही॥८९॥
आनंद अमृत सिंचित गात्र। कारज सिद्धि रिद्धि के पात्र॥
अँग अँग पर पुष्ट शरीर। हरषित बदन देखि नृप धीर॥९०॥
बाँचि लेख नृप सुनि तिन वैन। सब राजनि के अति सुख देन॥
मन वांछित पूरे हम काज। जानो धर्मसैन महाराज॥९१॥
गणक बुलाय लगुन धरि नीक। करि बिवाह मंगल दिन ठीक॥
कन्या नृपनु बुलावन काज। भेजे मंत्री सुमति जिहाज॥९२॥
दल बल प्रवल सुजन दे संग। चले सबै हरषित सरवंग॥
दल बल सहित सचिव सब जाय। जहां जहां ते नृप रहे ठहराय॥९३॥
तहँ तहँ नगरिनु करि परवेष। राज द्वार गये सकल सुवेष॥
जाय सभा मण्डफ बिच तेह। करि परिनाम नृपनु गुन गेह॥९४॥

मधुर बचन रस करि तिनु तबै । सकल राज जन सींचे सबै ॥
हे महाराज अरज सुनि लेहु । तब हम को कछु आयसु देहु ॥६५॥
हैं धरनी पर बहु भूपाल । वर विभूति मंडित दर हाल ॥
नृप श्री धर्मसेनि को चित्त । तुम ही में व्यापतु है नित्त ॥६६॥
तुम सों मैत्री भाव विशेष । राखतु हिये लिखी विधि रेख ॥
प्रगट वंश नृप के सँग सही । है विवाह मैत्री सुख मही ॥६७॥
बुद्धि अमोघ सुयश विस्तार । गोत्र पवित्र करन अधिकार ॥
धर्मसैन नृप ऐसी मानि । सुत विवाह करने मति ठानि ॥६८॥
तुम से सजन बुलावन काज । हमको भेजो हे महाराज ॥
कन्या सहित विमल कुल थंभ । चलो वेगि मति करो विलंब ॥६९॥
इमि कहि दूत सकल शुभ बैन । चुप हुइ रह्यो अधोमुख नैन ॥
हर्ष सहित राजा सुनि सबै । कहत भये दूतनु सों तबै ॥१००॥
करि हैं हम नृप वांछित काज । राजा धर्मसैन महाराज ॥
हम सों प्रीति करतु अधिकाय । इह विधि मनमें कहि सब राय ॥१॥
श्री धृतिसैन आदि नृप जेह । ले संग सुता चले सब तेह ॥
पालिकी ऊपर करि असवार । और सकल जन ले ले लार ॥२॥
मंत्री वर विभूति संग लेय । सेना सहित प्रयाण करेय ॥
मारग में जाचिक जे आय । तिनि को देत दान अधिकाय ॥३॥
स्तुति करि हरषित मन होय । निज निज गृह पहुँचे ते लोय ॥
बाजे बाजत गहन गंभीर । गमन करत नहिं धरते धीर ॥४॥
कुमर वरांग पुण्य परताप । प्रेरित नृप सब आये आपु ॥
पुर सुकाँतपुर किये परवेस । जिनके संग अधिक अवलेस ॥५॥
पुर मंदिर खाली कर दिये । तिनि की शोभा को बरनये ॥
तोरन और पताका जहां । शोभे सरस चँदोये महा ॥६॥

तिनि में वास किये तिन आय। श्री धृतिषेण आदि जे राय ॥
करत परस्पर कथा विशेष। सुख पूर्वक तिष्टै जु अशेष॥७॥
धर्मसैन तिन किय सन्मान। दे वर वस्त्र असन अरु पान ॥
उर आनंद भयो अधिकाय। सबहिनु के कछु कह्यो न जाय॥८॥
तब पुनि धर्मसेन नृपराय। पुर विच शोभा सरस कराय ॥
निज मंदिर बिच मंडफ थान। करवायो सुन्दर द्युतिवान॥६॥
ताकी शोभा कहां वरनऊं। मैं तो अल्प मती अधिकऊं ॥
तोरन दर्पन धुजा बितान। शोभें वहु बिच मंडफ थान ॥१०॥
शुद्ध लगुन पंचांग बिचार। पंडित धरी जु सरस सम्हारि ॥
नृप सुत व्याह काज लखि सोय। ताको दान दियो वहु जोय ॥११॥
कुमरहि तबै स्नान करवाय। वस्त्राभरण दिये पहिराय ॥
पीछै राजनु राजकुमारि। सिंगारित किय जन मन हारि॥१२॥
मणि प्रवाल मुक्ता फल जाल। रतन जड़ित आभरण विशाल॥
पहिराये तिनिको सर्वंग। जिन लखि लाजत त्रिया अनंग॥१३॥
ल्याय कुमारि जु मंडफ माझ। थापन किय मनौ फूली सांझ ॥
नर नारी मिलि मंगल गान। गावति हैं बिच मंडफ थान॥१४॥
तिनि में एक बनिक की सुता। धनदत्ता नामा गुण जुता ॥
ताको रूप अधिक वरणयो। ताहू को वरांग परनयो ॥१५॥
हैं नवीन सब राजकुमारि। कुमर कर गृह करि दुति धारि ॥
ज्यों सरवर बिच कुमुदिनि लसे। त्यों ते कन्या तिस उर वसे॥१६॥
निरखि समान रूप वर अंग। सुजन प्रमोद धारत सरवंग ॥
दीप धूप गंधाक्षत ल्याय। दधि दूर्वा युत अर्घ बनाय ॥१७॥
पुत्र वधू की नव नृप नारि। करत आरती हित चितु धारि ॥
गुण देवी आदिक सब वाम। और त्रिया जे नृप के धाम ॥१८॥

पुत्र वधू लखि हरषित सबै। देंहि अशीष यही विधि तबै॥
चिरंजीव हूजो नृप नंद। पालो राज प्रजा अर बन्धु॥१९॥
दीन अनाथन कों बहु दान। देकरि पावन करो सुजान॥
तब सो नृप आये जे सर्व। धर्म सेंन लखि भये निगर्व॥२०॥
धर्म अर्थ कामन त्रय साधि। गमन करन आराधन राधि॥
सुफल जन्म मान्यो निज धन्य। हम समान नहिं भुवपर अन्य॥२१
यह विचारि चित में नृप सबै। चलने को उद्यम किय तबै॥
धर्मसेंन नृप यह विध जानि। वस्त्राभूषण बहु विधि आनि॥२२॥
बहु सन्मान कियो तिन केर। विदा किये आये नृप जेर॥
पुत्र बंधु युत नृप ग्रह आय। दूर देश लगि तिंहे पठाय॥२३॥
ते वरांग गुण नृप सुमरंत। जानि जमाई निज हरषंत॥
निज निज नगरी पहुँचे जाय। थिरु ह्वै बैठे मन हरषाय॥२४॥
तब वरांग नृप सुत अभिराम। वा संयोगनि पहुंच्यो धाम॥
नारिनु सबनि कराय प्रवेश। नृप की आज्ञा पाय विशेष॥२५
हास्य विनोद कथा बहु करत। नव यौवन तन त्रिय मन हरत॥
कला कांति गुण पूरन काय। करत प्रेम तिन सँग सरसाय॥२६॥
रमत भयो तिनि सँग तिहि समै। सो कछु कहत न आवत हमैं॥
मन मंदिर तिन कियो प्रवेश। लाज कपट खोलि तिहि देस॥२७
तिनहिं बढ़ाय विषय अनुराग। कामातुर तिन करहिं बड़भाग॥
बस्त्राभरन देय तांबूल। वरन वरन मन हरण दुकूल॥२८॥
मधुर बचन भाषण करि तबै। संतोषित कीनी त्रिय सबै॥
भोग उपभोग जोग्य जे वस्तु। पुन्य योग संयोग समस्त॥२९॥
ताको होत भयो तिहि वार। सुख भोगत नाना प्रकार॥
निज कामिन संग करि सब केलि। काल व्यतीत करत दुख ठेलि॥३०

गीतका छन्द।

कुल ऊंच जे जन जन्म, पावत भुवन व्यापत जश भले।
सो सिंह सम वर धरन विक्रम, सुजन आयश ले चले॥
नर नारि दृग भरि लषत तसु शुभ रूप सरस सुहावनो।
वर विभो प्रापति होति तिस यह पुन्य फल मन भावनो॥३१॥

सवैया-धैर्य को धाम ऐश्वर्य धर नाम बहु,
विनय गुण ग्राम उर वसत नित जास के।
सकल पट थालतो जैन मत पालतो,
कर्म वसु जालतो कुमति मति नाश के॥
निरषि सुत को नृपति होत मन मुदित अति,
धर्मसेनो नृपति ग्रेह थिर बास के।
पुन्य परताप जह जानि जिय आपु सब,
टालि मन दरपु जिन भजे सिव आस के॥

दोहा-भव बन भ्रमन करत सदा, जे जिय लहत न मग्ग।
तिनहिं लगावत सुगम पथ, तिन गुरु नमूं समग्ग॥३२॥

इति श्री वरांग चरित्रे श्रीमत् भट्टारक बर्धमान विरचिते यस्य भाषायाँ नाम द्वितीय सर्ग समाप्त॥२॥

अथ तृतीय सर्ग ।

चौपाई-एक समय प्रातहिं वन पाल । आयो नृप मंदिर दर हाल ॥
सोवत ते राजा सुख चैन । नाम वरांग पिता धर्मसेन ॥३३॥
बंदी जन आये तिस द्वार । उच्च शब्द किय जय जय कार ॥
तिस सुनि शब्द उठो तजि सेन । राजा कर जुगमीड़ित नैंन ॥३४॥
वस्त्राभरण पहिर निज अंग । सोहतु इमि जिमि दुतिय अनंग ॥
कनक सिंहासन पर दुति धरन । तोष पूर्ण हिय जन मन हरन ॥३५
आय सभा मंडफ थिति कीन । दान दियो जाचक जन दीन ॥
इतने में माली सो आय । अरज करतु निज शीस नवाय ॥३६॥
छह ऋतु के फल फूल समेत । राजा के आगे धरि देत ॥
हे प्रभु याही नगर समीप । आये गणधर ज्ञान प्रदीप ॥३७॥
नाम जासु वरदत्त सुजानि । चारि ज्ञानधारी गुन खानि ॥
जिन प्रभाव बन फूल्यौ सबै । फल जुत सज्जन उपमा फबै ॥३८॥
नेमिनाथ प्रभु के गुण धार । जिन गुन को नहिं पारावार ॥
माली के मुख तें सुनि बैंन । गणधर आवन अति सुखदेन ॥३९॥
दिये उतारि तिसे वस्त्राभरण । हर्ष सहित नृप जे पग धरन ॥
सात पेंड उठि करि परणाम । तिसि ही दिसि चलि के गुण धाम ॥४०
आनंद भेरि नगर बिच धाइ । परिजन सहित चल्यो नृप राइ ॥
पुर वासी सज्जन नृप लार । बंदन चाले जिन गुण धार ॥४१॥
धर्मसेन नृप गज आरूढ़ । मंत्री मित्र कलत्र अगूढ़ ॥
पुत्र सकल गज बाजि महान । रथ ऊपर चढ़ि कियो पयान ॥४२॥
श्री वरांग जो राज कुमार । तिन सब आगें चलो उदार ॥
दूरि देशतें निरषि यतीन्द्र । पांय पियादे चलो नरेन्द्र ॥४३॥

तीन प्रदच्छिण दीनी जाय। तिन के चरण कमल सिर नाय॥
और जतीश्वर हैं जिहि थान। तिन प्रति बंदन करी सुजान॥४४॥
कुशल च्छेम सब पूंछि नरेश। दर्शन ज्ञान चारित्र सुभेश॥
पुनि गणधर प्रणमति करि सोय। तोक काज अवलम्बित होय॥४५॥
अवसर पाय प्रश्न को धीर। महा बुद्धि धारी नर धीर॥
कमल कलीवत करि कर जोर। स्तुति करने मन धरत बहोरि॥४६॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

प्रभुजी सुनिये करुना निधान। मुनि गनपति पदधर चतुर्ज्ञान॥
मो शीश सुफल जब नमों आय। जुग नैन सफल तुम दर्श पाय॥४७॥
तुम चरन कमल हिय माझ धारि। भयो सुफल चित तुम गुन विचारि।
मैं भयो भुवन निरद्य अद्य। भवि लोकनि विच धोरी सुसद्य॥४८॥
अब भई सकल मम काज सिद्धि। तुम आवन करि भई प्रगट ऋद्धि॥
तुम हो त्रिलोक केवल प्रबोध। किये कर्म शत्रु सेना निरोध॥४९॥
जग जंतु दया करि जगत तात। भविजन कमलाकर सूर्य प्रात॥
श्रुत उदधि बढ़ावन चन्द्र जेम। बादी गज मद दारी सुएम॥५०॥
संशय गिरि मानत बज्र पान। कछु धर्म भेद कहिये बखानि॥
दोहा- धर्मसेनि नृप के बचन, सुनि यतिपति हितकार।
सर्व भव्य हित करन कों, कहत मधुर गिर धारि॥५१॥

॥ चौपाई ॥

धर्म दया मइ शिव सुखकार। द्वै विधि भेद करि कियो निरधार॥
श्रावक अरु पुनि जत्याचार। इह विधि कह्यो जिनेश्वर सार॥५२॥
प्रथमहि श्रावक के व्रत कहों। समकित आदि भेद वरनहों॥
पंच अनुव्रत गुणव्रत तीन। शिच्छा व्रत चारों चित चीन॥५३॥
अब पुनि भिन्न२करि कह्यों। भेद जिनागम ज्यों सरदह्यों॥

जंतु विरोध प्रथम परिहरे । मृषाबाद कबहूँ नहिं करे ॥५४॥
चोरी पर रमनी परिहार । लोभ त्याग पांचों निरधार ॥
दिशा देश को करि परिमान । अनरथ दंड त्याग पहिचान॥५५॥
तीनि गुण व्रत हैं इन माहिं । पुनि शिक्षा वृत भेद बतांहिं ॥
आठैं युग चौदसि युग जासु । ये चारो हैं बहु उपवास ॥५६॥
पोसा माड़े भूमि मसान । त्यागे चहुविधि असन सुजान ॥
ये सब मिलि द्वादस व्रत भये । अन्त समाधि मरन वरनये ॥५७॥
ये श्रावक के वृत हैं सार । पुनि भाष्यो वर यत्याचार ॥
दर्शन ज्ञान आदि बरनयो । पुनि चारित तीजो सरदयो॥५८॥
त्रिविधि सुद्धित सुदेह बताय । सुनिये धर्मसैनि मन लाय ॥
जो जिन नाम तपोधन भक्त । सर्व काल जिन बचनासक्त ॥५९॥
साधु संग बिच बर्तत जोय । दर्शन शुद्धि यतीश्वर होय ॥
सप्त तत्व नव पद रुचि धरत । भव्यनु प्रति उपदेश जुकरत॥६०॥
स्वाध्याय कारक मुनिजन जोय । शुद्ध बोध ताकों अति होय॥
मुनि मारग जो कह्यो उदार । तिस बिच नित बर्तत अविकार॥६१॥
औरनि शिक्षा देत सुभाय । सो मुनि शुद्ध वृत्त धरि काय ।
अब तीनों के भेद सुभाय । भिन्न भिन्न करि देंउ बताय॥६२॥
दर्शन भेद त्रिविधि करि जानि । क्षायक उपशम वेदक मानि॥
क्षायिक सप्त प्रकति करि नाश । उपशमतें उपशम परकाशि॥६३॥
षटकों क्षय इक वेदति जहाँ । वेदक सम्यक कहिये तहाँ ।
सातों को जुउदय जहाँ होय । मिथ्या दर्शन कहिये सोय ॥६४॥
वसुविधि बोध कह्यो जिनराय । ताको भेद सुनों मन लाय॥
मति श्रुत अवधि विविधि शुभ जान । मन पर्यय केवल परमान॥६५॥
कुमति आदि श्रुत अवधिमिलाय । आठो कहे भेद जे माय ॥

पंच महाव्रत सुमति जुपांच। तीनि गुप्ति भाषी श्रुति सांच॥६६॥
तेरह विधि चारित है येह। मुनि को धर्म जानि सुख गेह॥
रत्नत्रय जे सुख करतार। जग में भाषें जग भर्तार॥६७॥
भविजन को सुख शिव दातार। इनि बिनु लहे न भव दधिपार॥
तत्व ज्ञान धर साधे येह। वांछित फल पावें नर तेह॥६८॥
एकहि दर्शन करि भवि जीव। दुर्गति दुःख लहे न सदीव॥
शुद्ध भाव जुत जो पुनि होय। सुर शिव सुख पावे नर सोय॥६९॥
ये भवि दर्शन ज्ञान चरित्र। जिनमत दृढ़ चित धारि पवित्र॥
तिनि को वांछित सुख को हो प्राप्ति। होय सकल भव भ्रमन समाप्ति॥७०॥
इह विधि जिन भाषित वर धर्म। कीजै भो नृप पावन पर्म॥
जो त्रिलोक सुख वांछा चित्त। तो कीजै तन मन दे चित्त॥७१॥
अरु पुनि धर्म रहित जे जीव। बिलखे ते जन विकल सदीव॥
गणधर के सुनि बचन रसाल। धर्मसेन सुत जुत तिहिकाल॥७२॥
नाम वरांग जासु को कह्यो। तिन दोउनि श्रावक ब्रत लह्यो॥
रोम रोम सुख पूरत गात। भये वरांग पुत्र अरु तात॥७३॥
और भव्य जन आये जिते। धर्म धारि हर्षित भये तितै॥
भये दिगंबर वृत धरि एक। एकनु धारो जिन मत टेक॥७४॥
केई इक निर्मल चित्त सुभाय। श्रावक ब्रत धारे हर्षाय॥
देव शास्त्र गुरु करि परतीत। एकनि धारी समकित रीति॥७५॥
यह विधि भव्य जीव जे आय। ते शिव धर्म धारि अधिकाय॥
गये खुशी हुइ निज निज थान। आगे और सुनो दे कान॥७६॥
राजा धर्मसेनि नर नाथ। पुत्र मित्र सब ले निज साथ॥
नमिजिन नाथ चरण युग तबै। आनंद सहित चले पुर सबै॥७७॥
यतिपति चरन चित्त संस्मरन। करत वराङ्ग पुत्र गुन धरन॥

पितु आचर्ण चित्त वृत करत। तन सम मदन सदन निज चरत।।७८।।
सुत युत काल व्यतीतत जासु । सुख में सदा कहे कह तासु ॥
सो संजम तप तिगति निज धारि। ईर्यापथ सोधत कर चारि।।७९।।
भूमि अग्र चालत बरवीर । थिर मानस पुनि चरम शरीर ।।
प्राणि वाधि चित रहित विकार । देश देश बिच करत विहार॥८०।।
तिन प्रबोध धरि निज उर माँहि। धर्मसेनि सुत गृह थिर थाँहि।।८१।।

अडिल्ल छन्द—सम्यग्ज्ञान चरन युत समकित पाय के ।
पात्र हेत नित दान देत हरषाय के ॥
पूजन भावन धर्म ध्यान तप आदरें ।
साधु संग जिन मार्ग वरांग सुभाचरें ॥८२॥
धर्म भावना गुरु की विनय विचारि कें ।
सज्जन बांधव लोकनु शोक निवार कें ॥
दीन अनाथनि दान दया करि देत हैं ।
बैरी लोगनि बीच प्रताप उपेत हैं ॥८३॥

दोहा—सज्जन जन पालत सदां, करत धरत चित प्रीति ।
श्री वरांग नृप सुत सदाँ, उत्तम कुल यह रीति ॥८४

इति श्री वरांग चरित्र महा भट्टारक वर्धमान विरिचितं तस्य भाषायां कृतौ श्री वरदत्त गणधर धर्मोपदेश वर्णन नाम तृतीयः सर्गः ॥३॥

अथ चतुर्थ सर्ग ।

॥ चौपाई ॥

एक समय राजा धर्मसेनि । पालत प्रजा करत सुख चैन ॥
निज गृह सभा बीच सुख पाय । सिंहासन पर बैठो आय ॥८५॥
निज सुत गुण जन मुख सुनि बानि । सो वरांग सुत बहु गुण खानि ।
यह बिचार नृप पूछतु सबनि । मो सुत बीच गुणाधिक कवनि ॥८६॥
कौन कौन गुण उज्जिल देखि । किस बिच सो तुम कहो विशेषि ।
इमि राजा के बचन मनोग्य । सुनि मन्त्री चारों शुभयोग ॥८७॥
कहत भये सुनि हे नर देव । एक अरज हमरी सुनि लेव ॥
सुत वरांग तुमरो गुनवान । सब पुत्रनि में परम सुजान ॥८८॥
सकल कला युत है निकलंक । तेज कीर्ति धर सूर निशंक ॥
शशितें अधिक सौम्यता जासु । अधिक प्रताप सूर्य तें तासु ॥८९॥
सागर तें गम्भीर महान । धीर वीर जिस सम नहिं आन ॥
सामन बादर तें जु उदार । भुवतें अधिक क्षमा गुन धार ॥९०॥
भाग्य सुभाग्य जुगम संपन्न । प्रजाप्रीति कर मनहिं प्रसन्न ॥
निज शरीर करि भूतल माँहि । करन प्रकाश और कोउ नाहिं ॥९१॥
सुन्दर निज गुण करि तिन सही । पूरित करी सकल तल मही ॥
कवि जन काव्य करन के जोग । जाके गुण हैं अधिक मनोग ॥९२॥
मधुर शब्द नित बोलत बैन । नृप मंत्री परि जन सुख देन ॥
कवि मन ताप हरन गुण कूप । दान देय कीने सुख रूप ॥९३॥
उज्जल करत सकल भुइ भवन । निज गुन जल करि जगत प्रसन्न ॥
शशि कलंक धरि भयो विशेषि । उज्जलता गुण जासु परेषि ॥९४॥

शिष्ट दुष्ट पर सम परनाम ? एक दृष्टि देखत गुण धाम॥
जिन श्रुत शस्त्र कला विज्ञान । त्रिवर्ग साधन उद्यम वान॥९५॥
रिपु निज जीतनकों वर वीर । प्रजा पालना करत सुधीर ॥
परकों क्लेश करन मुख वानि । कबहुं न बोले निर्जजिय जानि॥९६
विनय न्याय मारग धृति चित्त। पर उपगार करत सो नित्त॥
इत्यादिक गुन रत्न भंडार । सोहत नाम वराँग कुमार ।९७॥
सौजन्यता विनय गुनवान । सज्जन पालक यश की खानि ॥
पूजा पूज्य करन गुन सही। हिरदे धारत सो गुण मही ॥९८
भाग्य सुभाव सहित सौंदर्य । चतुर विचार करत दुख तर्ज्य ॥
जिस गुण सुर नर कहि नहिं सकें।तिनको हम कहते मुख थके ॥९९
ताके गुन तुम ही लखि लेहु । और न कछू बिचार करेहु ?
कर कंकन देखन जन जोय। धरत मुकर कर सठ जन सोइ २००॥
सुनि मंत्रिनि के बचन रसाल । मन विवाह करतो दर हाल ॥
धन्य वरांग नाम सुत मोर । जाके गुन गावत बुध जोर॥१॥
मुनि जन गुण गावत जिस सार । अर सज्जन कुलीन बुधि धार ॥
सोई पुरुष उत्तम है धन्य। जाके सम जग जन नहिं अन्य॥२॥
राज देश कुल वृद्धि निमित्त । दे युवराज होउ सो चित्त ॥
मेरे पुत्र और जे गेह । तिनि में अधिक पुन्य धर येह ॥३॥
तातैं जाहि देय युवराज । मंत्री सुनों बात बुधि आज ॥
सुनि स्वामी के बच अवदात । मंत्री चतुर भये सुख गात॥४॥
कहत भये चारों वर वानि । भली बिचारी नृप जिय जानि ॥
धर्मसेनि राजा सुनि सोय ।सुनि बच मंत्रिनु के जिय जोय ॥५॥
आनंद धरतु हिये निज माहिं। सो मोपै कछु बरनि न जाहिं॥
शुभ दिन लगुन महूरत साधि ।देव शास्त्र गुरु कों आराधि॥६॥

सुवरन कुम्भ नीर भरवाय । कुमर वरांग स्नान करवाय ॥
वस्त्राभूषण भूषित अंग । सोहत मानों प्रगट अनंग ॥७॥
कनक सिंघासन पर बैठाय । राज्य तिलक कीनों नृप ताहि ॥
सिंघासन पर अति सोहंत । सिर पर उज्जल चमर ढुरंत ॥८॥
लखि जन मन आनंद धरि काय । नमस्कार करते मन ल्याय ॥
पत्तन शोभा करि तत्काल । दान दियो जाचकनु अपार॥९॥
श्री वरांग को राज्यभिषेक । देख सकल जन मुदित अनेक ॥
सुतनु तेज करि अति सोहंत । और नृप सबनि किये दुख वंत॥१०॥
थित युवराज श्शोमि बिच जोय । लसतु वरांग सूर्य सम सोय॥
और सकल राजा सुत येह । उड़गनि सम भासत सब तेह ॥११॥
सिंघासन बैठो लखि ताहि । और सबै मन कोप कराहि ॥
कुमर सुषेन आदि अज्ञान । निज भुज बल गर्वित मद् वान ॥१२॥
दंड धराधर कारे दृग लाल । कहत सभा बिच ते दर हाल ॥
क्या हम महीपाल सुत नाहिं । निज मन में देख्यो अब गाहि॥१३॥
जामें है अब क्या गुन भूरि । जातें हमें कियो नृप दूरि ॥
तिन पितु मात जात हम नांहि । का अवगुन देख्यो हम मांहि॥१४
शस्त्र शास्त्र सुकला विज्ञान । वीर्य धैर्य करि रहित निदान ॥
भये सकल हम तुम जड़ जान । जातें नृप हम किय अपमान॥१५॥
हम सब बड़े खड़े इस पास । यह लहुरो सिंघासन बास ॥
ऐसो युक्तायुक्त बिचारि । क्योंन कियो पितु मंत्रिनि सारा॥१६॥
जो नृप जहिं दीनों युवराज । तो हमसों तुम भाष्यो आज ॥
राजा परजा मंत्रि सलाह । करि करिकें निज बचन निवाह॥१७॥
हमसों करि विरोध इह समैं । कितनों काल राज्य में गमैं ॥
मंत्री चारों सुनि तिनि बैन । राजा के श्रवननि दुख देन॥१८॥

करि आस्वासन तिनि को तबै। कहत भये मंत्री ते सबै ॥
भो भो राजकुमार सुजान। तुम हो सबै सरस बुधिवान॥१६॥
न्याय शास्त्र के जानंनि हार। जामें कीजै कहा विचार ॥
मेरे बचन सुनो मन ल्याय। जो निज हित बांछक थिरकाय॥२०॥
कहा बड़ा कहा लहुरो होय। भाग्य बड़ो सबको जिय जोय ॥
ज्यों मदमाते गज बन माहिं। मृगपति रव सुनि सब भजि जांहि।२१।
गुनशाली जु वरांग कुमार। विधि बल दीनों जासु अपार ॥
तासो स्पर्द्धा करते तुम्हीं। क्या तुम ही बुधि विधि ना गुन्हीं॥२२॥
यह विचार फल दायक नांहि। तुमको हे समुझो मन मांहि ॥
नहिं वर बंसन गुण अधिकाय। नहिं पौरुष नर कोइ सहाय।२३॥
मंत्रीनि के सुवचन सुनि तबै। उत्तर दे न सकै पुनि तबे ॥
अपने २ स्थानक गये। बिलखि बदन हुइकें थिर थये॥२४॥
हार जासु को पुन्य विशेष। ताही के वश होइ विशेष ॥
जोह तो पूर्व पुन्य फल जानि। राजरिद्ध नर पावत आनि॥२५॥
नृप मंत्री परिजन तिहि काल। आनंद धरि मन भये निहाल ॥
सब वरांग के गुण सुमिरंत। जाय गेह तिष्टे निहचंत ॥२६॥
गुन देवी बैठी निज थान। राज त्रियन संयुक सुजान ॥
राजा तहां भेजो नर एक। तिस मुख धुनि सुनि धरनि विवेक॥२७॥
राज लाभ सुत को जिय जानि। दियो दान तिस को बहु आनि॥
मन में धरि संतोष अपार। सो तिन सों बच कहत उदार॥२८॥
सकल मनोरथ पूजे आज। करन रह्यो नहिं मो कछु काज ॥
आज भई मैं नृप की प्रिया। मो सुत को नृप निज पद दियो॥२६
लोकनि बीच सराहन जोग। भई आजु मैं महा मनोग ॥
पुन्य विरछ फल यो मो सही। निहचे करि जिह जानो तही॥३०

अवसर पत्नी जाकी जेहिं । सुनि तसु वचन कहति करि नेह ॥
सुन कल्यान रूपिनी नारि। हम सब में तू भई सिरदारि ॥ ३१॥
जैसे सर्व रिता बिच संग । ज्यों तू हम बिच भई सरवंग ॥
तू हम भगिनी जेठी आहि । तेरी उपमा दीजे काहि ॥३२
माता सम हित चित्त निहारि । हम सन्मान दान दातार ॥
होउ सबनि में तू बड़ भाग। हम सब तोपर करें अनुराग॥ ३३॥
यह कहि ते सब चुप हुइ रहीं । ज्यों बन वेलि दवानल दही॥
तिन में इक मृगसेना नाम । राजा की जो है बर बाम॥ ३४॥
सो बोली मन में धरि क्रोध । जाके हिरदे नांहि सुबोध ॥
साभिलाष बच कहि करि सोय । गई गेह अति दुःखित होय॥३५॥
एक थान थिति करि सो नारि। रुदन करन लागी जु पुकारि ॥
नैन युगल जल पूरित जास। गद् गद् बोलति अधिक उदास॥३६॥
वे तो चतुर महा महाराज। बिन बिचार कीनो किम काज ॥
अथवा राजा को नहिं दोष। मो परि कोयो करम रिपु रोष॥ ३७॥
क्यों सुषेन नृप सुत नहिं होय । हौं नृप की न प्रिया जिय जोइ ॥
ईश्वर रेख लिखी जु ललाट । ताकी कौन करे उच्चाट॥३८॥
इह विधि सोच करत मन माँहि। उपज्यो क्रोध अधिक तन माँहि ॥
तब सुषेन सुत को बुलवाय । कहति भई तिस कंपित काय॥३९॥
पुत्र जियत मरत क्या होय । काज अकाज मात को लोय ॥
मान भंग करि जीवै मात । जो छांडे अति दुःखित गात॥४०॥
जेष्ट पुत्र सुत तुम नृप केरि । ज्यों कुल गिरि में बड़ो सुमेर ॥
तुमहिं बिचेष्ठि तिलक किम राज।दियो वरांगहि नृप बुधि भ्राज॥४१॥
गुन देवी सुत की जु बिभूति। देषि भई सुत आजु निपूति॥॥
सब नृप नारिनु में हों बड़ी। सो सुत मोहि कालिमा चढ़ी॥४२॥

मान भंग हुइ क्या तन धरन। अब घत ही बांदों निज मरन॥
यह विधि सुनि माता के बैन। कहतु भयो तब पुत्र सुखेन॥४३॥
मात विचेष्टित सुनो न दीष। पिता कियो जो काज मनीष॥
तातें क्यों वह राज वरांग। हम जीवति करिहै सरबांग॥४४॥
इम माता कों करि आश्वास। निज मंत्री बुलवायो पास॥
तब सुखेन तासों इमि कही। जाकी बुधि विवेक हत भई॥४५॥
हम वरांग सन करि संग्राम। लेंहि राज्य निज पूरें काम॥
देहु घोषणापुर में जाय। नोके करि तुम पटह बजाय॥४६॥
मान भंग नर को जब होय। तब तिन मरन बिचारे सोय॥
कै संग्राम जीति हैं ताहि। कै हम प्राण रहित हुइ जाय॥४७॥
के वहि जीति करेंगे राज। के मर जांहि लाज के काज॥
ऐसे बचन कहत जु सुखेन। राजा प्रजा सबै दुख देन॥४८॥
मंत्री तबै निवारतु ताहि। बात कहत नाहीं सकुचाहि॥
माता पुत्रहि कर इकठोर। मंत्री बचन कहत कर जोरि॥४९॥
माता पुत्र सुनो मुझ बानि। जामें होय कलह की हानि॥
दैवी बल युत जो नर होय। ता संग कलह करै नर सोय॥५०॥
भाग्य वली सोही वलवन्त। ज्यों रावन अरु सीता कंत॥
चकि केसब प्रतिहरि के जेह। साधत हैं भूतल नृप तेह॥५१॥
सो सब पूर्व पुन्य परभाव। जामें संशय कछू न लाव॥
नहिं कुल बल विद्या कछु करै। लघु दीरघ को भेद न धरै॥५२॥
नहिं पौरुष कछु आवे काम। भाग्य वली सबको सुख धाम॥
पुन्य पाप फल और कु और। को करि सके मृषा यह दौर॥५४॥
नर सुर असुर नागपति आय। करत सहाय शुभोदय पाय॥
तो जामे अचरज है कहा। पुन्य ही की महिमा जग महा॥५५॥

त्यों वरांग के पुन्य संयोग । करत सहाय सबै नृप लोग ॥
हैं वरांग सुभ युत जो बली । ता संग कौन करै रण रली॥५५॥
हम करि समरथ है नहिं कोय । तसु विरोध करने जिय जोय॥
ताहि विरोधत होय विरोध। बहु जनसों जह जानि सुबोध॥५६॥
दोहा--बहुतन सों विरोध कछु । कीजे बिना बिचार ॥
ज्यों गज को तनु कीटिका । भक्षन करै सवार॥५७॥

॥ चौपाई ॥

गुप्त वृति करि कछू उपाय । करिये तुम हो नी सुखदाय ॥
सावधानता मनमें गहो । गूढ़ वृति करि थिर हुइ रहो ॥५८॥
करि विचार जो करते काज । तिनिको सिद्ध होय सुख साज ॥
मात्र पुत्र इह विधि संबोधि । चलने मन किय तिन्हें निरोध॥५९॥
वस्त्राभूषण दिये मंगाय । मंत्रीनि को तब निरख निकाय॥
सो सुबुद्धि चलि आयो गेह । कुटिल भाव अति धारत देह॥६०॥
श्री वरांग के गुननि बिसारि । अवगुन अवलोकन मन धारि ॥
वन कीड़ा को चलते ताहि । सभा सैन सोधन के माँहि ॥६१॥
मंत्री मनहिं कुटिलता धरी । तिस मारन मन इच्छा करी ॥
धूप जनसु विलोचन आदि । भोजन पान खादि इत्यादि॥६२॥
तिन बिच कुटिल भाव धरि सोय ।मारन जतनु करन मिस जोय॥
श्री वरांग के पुन्य प्रभाव।मंत्री कुटिल लहतु नहिं दाव॥६३॥
देहु उठाय राजतें जाहि । सुत सुखेन थापौ उस माहिं ॥
नित प्रति कपट चिंतवन करै । पाप उदै कहा कारज सरै॥६४॥
सो वरांग युवराजहि पाय । सबको पालन करत सुभाय ॥
रथ गयंद वर तुरग पयादि।चारि प्रकार सेन्य की जोति॥६५॥
ता करि सहित राज को करै । मात पिता आज्ञा मन धरै ॥

देश कोष बल संपति सहित। सो वरांग नृप सज्जन महित।।६६।।
पालंत राज्य प्रजा करि प्रेम । पितु माता सुत पालत जेम ॥
नये नये नित भोग विलास। करतु त्रियानि संग चित्त हुलास।।६७।।
कुमर बाल वय धरन अनूप । सोहतु कामदेव सम रूप ।।
औषधि अभय शास्त्र आहार। दान देत नित चार प्रकार।।६८।।
देव शास्त्र गुरु की करि भक्ति। पालतु राज खोलि निज शक्ति ।।
भोज वंश कुल शेखर सोय। काल व्यतीत करतु नित जोय।।६९।।
एक समै कोई नृप भगलेस । भेजे तुरग युगम शुभ वेस ।।
सुनि युवराज वरांग कुमार । जासु गुणनि को पारन वार ।। ७०।।
करि अनुराग सो मनहि विचारि। ताके गुण निज मन में धारि ।।
ते हय चपल रूप वर काय। दृग सगोष बहु भोजन खाय ।।७१।।
खुर करि खनत धरणि तलि पुष्ट। आगे मानों रपूपर (?) नष्ट ।।
शुभ लच्छण मंडित तिन देखि । हर्ष भयो युवराज विशेषि ।।७२।।
चिंता करितु पालना हेतु । तिनहि सिखामन पुनि चित देतु ।।
मानो रवि रथ छोड़ि निवास। कियो आय भूपर सुष आस।।७३।।
अथवा सुरपुर तें चै आय । भये सहोदर तिर्यग काय ।।
अहा चारित्र है खारव रूप। इन दोऊनि को परम अनूप ।।७४।।
विश्व सकल जन मोहन करन। सुन्दर वर्ण अधिक गुण धरन ।।
इह विधि सुमिरन करि मन माँहि। बैठि सभा बिच बचन कहाहि।।७५।।
शिक्षालाप क्रिया बिच जोन। ल्यावौ इनहिं चतुर नर तोन ।।
यह विधि राजा के सुनि बैन। मंत्री सुबुधि उठो सुख चैन।।७६।।
करि प्रणाम बचन इमि कहत। दुष्ट भाव उर अन्तर बहुत ।।
हय शिक्षागम पढ्यो निदान। बाल पने में परम सुजान।।७७।।
तामें मोहि अधिक है ज्ञान। जह निहचे जानों गुन खानि ।।

मंत्री के सुनि बचन वरांग । हर्षित मनमें भयो सर्वांग ॥७८॥
सोंप दिये बाजी दोऊ ताहि । कपट भेद तसु जानत नाहिं ॥
करि परनाम ले गयो गेह । राजा कीनों अधिक सनेह ॥७९॥
राजा के है निर्मल भाव । उन पायो मारन को दाव ॥
हय दोऊ सिखये तिन जानि । निज ग्रह लाय कपट की खानि॥८०
ताड़न बचन कहत इक चलै । दूजो ताड़न ते नहिं हिलै ॥
उलटी शिक्षा दीनीं ताहि । ताको कोई जाने नाहिं ॥८१॥
पाय सचिव की शिक्षा येह । भये दोऊ सुगति कुगति के गेह॥
ज्यों नर पाप पुन्य फल पाय । सुगति दुर्गति भाजन थाय॥८२॥

॥ कवित्त सवैया ॥

नवल वरांग धारि यौवन अनंग हारि,
नवल छबीली नारि पाय सुख में रमै ॥
करत नाना भोग उपभोग योग काल सदा,
रहत निरोग तन सुन्दर स्वभाव में ॥८३॥
मधुर सुख बानि बोले सब कों सुष दान करै,
करमन को हानि देव शास्त्र गुरुको नमै॥
पुन्य के प्रभाव करि पायो वर दाव धरे।
पूजादान चाव धर्म साधत समैं समैं॥८४॥

दोहा—पंडित जन जिस थुति करत, पालत शुद्धाचार ॥
श्री वराँग जिस नाम वर । राजत राज कुमार ॥८५॥

इति श्री वरांग चरित्रे श्रीमत भट्टारक वर्धमान विरचिते तस्य भाषायां वरांगस्य युवराज वर्णनं नाम चतुर्थः सर्गः ॥४॥

अथ पंचम् सर्ग ।

॥ चौपाई ॥

इक दिन प्रात होत युवराज । उठि सेज्या तें गुणनु जिहाज ॥
सूरज किरण रही जग छाय ।सुवरन कांति धरतु तसु काय॥८६॥
सेवक जन बहु लीने लार । और मित्र संग राजकुमार ॥
मन उत्साह अधिक धरि सोय ।प्रफुलित कमल बदन तनहोय।८७।
पुर वाहिर हय शाला जहां । तुरग फिरामन को गयो तहां ॥
तहां उच्चासन बैठि नरेश। सेवक वयस सहित इक देश॥८८॥
तहां देखत कौतुक वर जोर । चाकर जहाँ फेरत बहु घोर ॥
तहां मंत्री आयो सु सुबुद्धि ।धारें निज घट अंतर कुबुद्धि॥८९॥
कुमर वरांगहि करि परिनाम ।नाम सुबुद्धि कुबुधि को धाम ॥
आगें करि कुरंग दोऊ तबै। स्थिति यावत तावत नृप चले ॥९०॥
ए सुबुद्धि मंत्री बुधि धार । कैसे सिखये हय वर सार ॥
इन दोउन की चालि कुचालि। हमहि दिखोबहु भय नृप टालि९१॥
ऐसे बचन कहे नृप जबै । हुइ असवार एक पर तबै ॥
आन दिखायो कुमरहि सोय । सूधी चाल चलतु हो जोय ॥९२॥
इत उत गली बीच तसु फेरि । राजा हर्षित भयो हय हेरि ॥
लीला मात्र चलावत ताहि। जित खैंचे तितहीं हय जाय॥९३॥
मंत्री कहतु सुमन हरि लियो । अपनो पूर्ण मनोरथ कियो ॥
घोडे शिक्षागम भूपाल। चतुर जानि पुनि लखि वय बाल॥९४॥
मंत्री कहतु कपट की बात । राजा को लखि हरषित गात ॥

है महाराज दूसरो घोर। जातैं अधिक सिखायो जोर॥९५॥
तापर आपु ही हुइ असवार। देखहु जाकी चालि सुढार॥
इतनो बचन सुनत नृप बोल। तबै अश्व चढ़ियो द्रर हाल॥९६॥
यौवन राज गर्व युत होय। चार विचार कियो नहिं कोय॥
निज दुख देन कियो तिन काज। विधिवश ह्वैतिस कहा इलाज॥९७
कनकाभूषिण भूषित दोय। चल्यो तुंग ले नृप को सोय॥
उल्टी शिक्षा दीनी ताहि। ताते आगे धावतु जाय॥९८॥
ज्यों नृप खैंचत बाग मरोरि। त्यों त्यों आगे चालतु दोरि॥
धनुष बान सम गमन करात। काहू पै न निवारो जात॥९९॥
वल क्रोधादिक करि नृप यथा। खैंचतु बाग चतुर हय यथा॥
बन बावड़ी गिनतु नहिं कूप। आगे धावतु पवन सरूप॥ २००॥
कुञ्जर बाज चढ़ै नर जेह। पीछे धावत जात सु तेह॥
अनुगामी ना हुइ सके तासु। पलट आय घर कीनो वासु॥ १॥
मधुर बचन कहि करि युवराज। चुमकारी दे थिरता काज॥
है प्रतिकूल क्रिया हय सोय। गमन पवन सम करतो जोय॥२॥
दूर देश ले गयो नरेश। वन उपवन नाखत जम भेस॥
जनकहिं ले गयो खेचर तेम। माया मई अश्व करि जेम॥३॥
कुमर वरांगहि ले गयो वाजि। दुज मंत्री जह कियो इलाज॥
धावत ताहि सघन वन बीच। तरुनि वस्त्र मनु राखे खींच॥४॥
भूषन गिरे धरनि बिच तासु। वृक्ष लतानु तिनि कियो निवास॥
नदी सरोवर ग्राम अनेक। कर्वट खेट लँघि अविवेक॥५॥
इक छिन धीर धरतु कहुं नाहिं। कइयक दूरि देश ले जाहि॥
खेदखिन्न भयो तन भूपाल। सूखि गयो तसु बदन विसाल॥६॥
कंपित गात कराङिगि गये। दृग युग चपल दृष्टि परणये॥

तृण वल्ली आछादित कूप। तिस बिच गिरयौ तुरग ले भूप॥७॥
पूरव पाप उपायो कोय। तावश कूप परयो नृप सोय॥
तुरग मरन बश भयो ततकाल। जहाँ गहिरह्यो लता तरु डाल॥८॥
पकरि ताहि निकस्यो सो भूप। बैठो नृप भुवि ऊपर कूप॥
क्षुधा तृषा परि पीडित देह। श्रम उपज्यो मारग बिच तेह॥९॥
ताकरि मूर्छित भयो कुमार। पर्यौ धरनि पर नाहि सह नारि॥
शीतल मंद पवन के योग। व्है सचेत तन भयो निरोग॥१०॥
नयन जुगल उन्मीलित भये। दश दिसि में देखनि उमगये॥
एकाकी थिर व्है बन बीच। स्वांस लेत दृग जल तन सींच॥११॥
निंदतु सो जग कों बारंबार॥ मन में दुखित भयो अपार॥
मातु पिता त्रिय बंधव छारि। राज पाट सब जन परिहार॥१२॥
कर्म बली वस हूबो जबै। आनि परयो इस बन बिच तबै॥
मैं जियमें यह जानी सही। वा दुरमंत्री दुरमति गही॥१३॥
ता करि मोहि ठग्यो हिय आय। घोड़निको उन कारन पाय॥
अब मैं कहा करौं कित जांउ। निर्भय थान कहां मैं पांउ॥१४॥
चिंता किलेश करे कहा होय। अब हिंय शरन नांहि है कोय॥
बन रन शत्रु अग्नि जल जीव। पकरे बांधे कोई नर नीच॥१५॥
तहाँ धर्म ही करे सहाय। भाषो वेद पुराणनु गाय॥
तातें धर्म राखिये हिया। जाकी शरन उबरिये जिया॥१६॥
इह करि चिंततु मन में सोय। बस्त्राभरण जु पहिरे जोय॥
ते उतारि सत्र कूप मंझारि। डार दिये तिन लोभ निवारि॥१७॥
जे गुरु दिए बरत महि सार। ते मम होउ सहाय अवार॥
इम कहि तबै बाल भूपाल। आगे को चाल्यो दूर हाल॥१८॥
एकाकी वन भूमि कठोर। पांयनि गमन करत अति जोर॥

सिंह व्याल मातंग शृगाल । विचरत चीते अति विकराल॥१६॥
पंछी बोलें तरु जहां घनें । तम छायो कछु कहत न बनें ॥
ऐसे सघन विषम बन वीच । चलो जात नृप गिनत न मीच॥२०
गमन करत मग विगस्यो तहां । भयो दिगमूढ़ धीर मन महा॥
आगे को देखें जु निहारि । आवत सिंह महा भयकार॥२१॥
संध्या समय गमें तब कहां । शीघ्र हो तरु ऊपर चढ़ि गयो ॥
तहां लषि कुमरहि अति गर्जत ।ज्यों वारिधि गर्जत कल्पंत॥२२॥
मृग वांनर जीवनु परिहारि ॥ आयो तहां पूंछ फटकारि ॥
मानों जम भ्राता लघु सोय । वार २ उछरतु है सोय ॥२३॥
तरु ऊपर नृप को लषि जवै । पांयनि पृथ्वी खोदतु तवै ॥
भयकारी अति ही विकराल । आयो मनो दूसरो काल॥२४॥
भई रैनि अंधियारी महा । तरु डाली कछु देखिये न तहां ॥
ह्वै बालक धीरज मन सही । इक तरु डाली दृढ़ कर गही॥२५॥
भयकरि कंपित सकल शरीर । निज सिर धुनि थिर भयो बर वीर॥
सुमिरत हृदय पंच नमुकार । सब मनुष्य में उत्तर सार॥२६॥
निशा व्यतीत करतु भयो सोय । तहां वरांग अति दुःखित होय॥
भानु उदय उदयाचल गयो । निशि को तम तबही सब गयो॥२७॥
भयो प्रात तब कारज एक । और भयो सुनु धरन विवेक ॥
इक हस्थी आयो ततछिना । अति मदमानी अंकुश विना॥२८॥
युग कपोल मद झरतो जासु । फैलि रही तहाँ अधिक सुवासु॥
तहां आये अलि करत किलोल।ताकरि श्रवनि युगल दृगलोल॥२९॥
इकि हथिनी है जाके संग । आवतु करतु तरुन को भंग ॥
गर्जन करतु मेघ सम सोय । अंजनगिरि सम तन जस जोय॥३०॥
लखि गज सिंह चुधातुर काय । उछरि गगन सन्मुष तिस आय॥

तब तहां तिस दंती कहाकियो। दांतन सों तिस तनु बेधियो॥३१॥
पुनि उठाय मुख ऊपर सूढ़ि। धरनीतल डारयो करि चूढ़ि॥
तसु तनु फुनि पांयन सों मीड़ि।पकरि सूंड़िसों डार्‌यो चीड़ि॥३२॥
सो तब सिंह मरण वश भयो। तासु योग विधि यो निर्मयो॥
वृक्ष चढ़्यो बालक नृप देखि।मनमें अचिरज धर्‌यो विशेषि।॥३३॥
ऐसी सुनी न देखी बात। करिवर करें सिंह को घात॥
विधि को चेष्ठित अपरंपार। मैं मनमें कीनो निरधार॥३४॥
अथवा मेरे पुन्य बसाय। गयो सकल उपसर्ग नसाय॥
जिनवर चरन सरन मैं लयो। अरु नवकार मंत्र सुमिरयो॥३५॥
ता फल करि उबरे मो प्रान। यह निज जियमें लिखी निदान॥
यह विचार तब कुंवर बरांग। तरु ते तल उतर्‌यो जु अपांग॥३६॥
हाथी दूरि गयो वन माहिं। देखत दृष्टि परतु कहुं नाहिं॥
तब वन मग गहि आगे चल्यो।सूरज किरनि प्रताप्यो भल्यो॥३७॥
क्षुधा तृषा पीड़ित तनु जासु। दुख की बात कहे निज कासु॥
आगे सरवर देख्यो एक। जलचर जामें रहे अनेक॥३८॥
जल पूरित थल है कहुं नाहिं। फूले अधिक कमल जा मांहि॥
सरवर चहुंदिश तरुवर घने। बोलत खग तहाँ तिनको गिने॥३९॥
छाया शीतल लखि तट जासु। तहाँ जाय उन कीनों बासु॥
कर पद धोये जल तसु ल्याय।वस्त्र छानि जल पियो सुभाय॥४०॥
जल पिय करि छिन इक थिर होय।मारग श्रम तहाँ दीनो खोय॥
तहाँते उठि सरवर बिच गयो। बाल मूढ़ मतिह्वै उमगयो॥४१॥
जल तरने भयो उद्यम वोन। तहां पशु पकरयो गोह महान॥
बाहिर को निकसन मन कर्‌यो।छोड़तु नाहिं मगरूर पग गह्यो॥४२
तब तिन धर्म विषे मति धरी। मरन सन्यास प्रतिज्ञा करी॥

च्यारि प्रकार त्याग आहार । ता दिन उन वृत माड्यो सार ॥४३॥
जब उपसर्ग निवरिहे मोय । तब आहार करों जो लोय ॥
जह मोहि कष्ट अधिक तन भयो । मानों मरन निकट आगयो ४४
निज मुख कमल प्रकाशित रहै । सदा प्रान गुण लच्चण गहै ॥
तिन जिनवरको करो प्रणाम । जिन गुण सुमिरो आठो याम ॥४५
सर्व काल दुःख सुखके मांहि। शत्रु मित्र संग अमंग भयाहि ॥
होउ सहाय जिनेश्वर चरन । जो भविजनु भव बाधा हरन ॥४६॥
नर तिर्यंच मनुष्यगति पाय । तहाँ समकित मुहि करो सहाय ॥
अरु नारक गति में मै जाउं । तहाँ भवधरि समकित को पांउ ४७
सिद्ध सूरि उवझायरु साधु । नमन करों मेटो भव बाधु ॥
इम सर्मभावन में चितुधरत । देखो कुमर जच्छिनी तुरत ॥४८॥
दृढ़ समकित जाबुध पांय । ग्राह गह्यो पद दियो छुटाय ॥
छूटो चरण जानि भूपाल । सरवरते निकस्यो तत काल ॥४९॥
विस्मय सहित विचारतु एम । जामें पहिले धार्‍यो नेम ॥
धर्म सहाय करतु सब ठौर । जल रन बीच ना हित ओर ॥५०॥
इम उपसर्ग माझ ते छुटो । मो मन अवै धर्म में पुटो ॥
जिन श्रुति कथित सहित आचार । दिढ़ वृत धारत परम उदार ५१
जानि कुमर की जच्छिन जबै । आई धारि रूप त्रिय तबै ॥
पहिरे उर मुक्ताफल हार । कंचुकि शोभा सहित अपार ॥५२॥
लसत जासु नव यौवन अङ्ग । पहिरे सारी सुरस सुरंग ॥
उन्नत कुच युग लसे सुभाय । कानन कर्णफूल सुबनाय ॥५३॥
निरखि तासु को अद्भुत रूप । मन में अचिरज धार्‍यो भूप ॥
कहित बचन नृपसो मुख मोरि । मधुरी वानि दुहू कर जोरि ॥५४॥
को तुम हो कहांते आइयो । क्यों करि जहांवन अवगाहियो ॥

तब सो तासों पूंछतु एम । को तू इह बन आई केम ॥५५॥
क्यो निश्शंक भई वन माहिं । पूंछति मोहि तोहि डरु नाँहि ॥
फिर बोली तव जच्छिनि नारि । मेरे बचन सुनो जियि धारि ॥५६॥
बिन अपराध तात तजि दीयो । ना जानों कहा कारन भयो ॥
भ्रमत भ्रमत आई बन माझ । भूली मारग हुइ गई साँझ ॥५७॥
बन में फिरत वहुत दिन भये । क्रूर जीव जामें बहुतये ॥
नाना वृच्छ सघन बन बेलि । ताबिच विचरति हौं जु अकेलि॥५८
आई भ्रमति सरोबर तीर । देखे तुम मैं सुघर शरीर ॥
तुम तजि कहूँ जाऊंगी नहीं । अब मैं शरन तुम्हारी गही॥५९॥
तुम मो जीवन, तुम मो नाथ । अब मैं चलों तुम्हारे साथ ॥
अब मुहि कीजे अङ्गीकार । तुम ही हो मेरे भरतार ॥६०॥
आजु ही तैं तुम जानों सही । तुमरे ही मैं वश में रही ॥
निश्चै करि मुहि जानि कुलीन । राज कन्यका तुम आधीन ॥६१॥
इमि सुनि बचन तासु युवराज । कहतु भयो तासों गुण भ्राज ॥
आपु दरिद्र भारु सिर धरै । सो सम्पति पर कों किम भरै ॥६२॥
विपति उदय को प्रापति भयो । मैं तुहि आय शरन अब लयो ॥
क्यों कर तेरो रच्छन करों । आप ही दुखित तोकों क्यों वरौं ।६३॥
पुनि कीनों परदारा त्याग । निज दारा सों करि अनुराग ॥
श्री जिन साखि देय वृत लियो । श्री वरदत्त गनाधिप दियो ॥६४॥
सो वृत क्यों मैं खंडन करौं । जा वृत हेत प्रान परिहरौं ॥
इह पर भव विरोध करतार । ब्रत को खण्डन दुख दातार ॥६॥
ताहि नरोत्तम करत न जानि । यह तो बात नरक दुखदानि ॥
सुनि करि कुमर बचन निर्दोष । मनमें धरि जच्छिन सन्तोष ॥६६॥
माया काय दूरि तिन करी । देवी की निज आकृति धरी ।

कहति भई तासों इम बैन। जो सब जीवनि को सुख देन॥६७॥
हम तुम दोउनि के गुरु सही। वे वरदत्त गुनी गुण मही॥
हे आरज तुम भ्राता धीर। जागत हमरे गुण गंभीर॥६८॥
मैं तुम चित्त परीक्षा करी। मेरे मन की शंका टरी॥
तुम गुण बन मो मन क्षिति लसै। पुन्य प्रेम जल सिंचित लसै॥६९॥
अब चित चिंता मति कछु करो। पुन्य वृक्ष तव हूओ हरो॥
सम्पति राज्य मिलै तुमैं भलै। सब बंधव आज्ञा लै चलै॥७०॥
इम सम्भाषन करि जब सोय। देवी तब ही अदृश्यहि होय॥
तब वराँग नृप आगे चल्यो। फनस रूख इक देख्यो फलो॥७१॥
तहाँ गिरिते झिरना इक वहे। ताहि देख मन में इम कहे॥
इस तट जाय करों पारना। जह मन कीनी मैं धारना॥७२॥
फलसरूख फल ल्याय अनूप। कियो पारना सर तट भूप॥
तहां ते तब आगे को चलो। मारग में इत उत नंहि हिल्यो॥७३॥
कछु यक दूरि पहुँचियो जबै। भीलनि घेर लियो नृप तबै॥
निठुर बचन के भाषन हार। तब नृप मन में करत विचार॥७४॥
इन संग रण करनो नंहि योग। निज कृत कर्म छुटो हों भोगि॥
यद्यपि शक्तिवान हों सहीं। तद्यपिं इन सों लरिहों नहीं॥७५॥
व्याह विवाद मित्रतो छांडि। नीचनु संग ही मारे डारि॥
न्याय शास्त्र में भाषी एम। ताही माहि धरो निज प्रेम॥७६॥
ग्राह सिंह गज ते जु उबारि लीनो पूर्व पुन्य अब धारि॥
सोई मोकों रक्षा करो। जाके शरन प्रथम ऊबरो॥७७॥
इह विचार नृप चुप हुइ रह्यो। कछू बचन उन सों नहिं कह्यो॥
दयाहीन ते बन के भील। कूर कुबुद्धो लंबे डोल॥७८॥
मारि चपेटनि लेगये बांधि। आप निज निज आयुध साधि॥

नाम कुसुम्भ जु है सिरदार। ता समीप ले गये असवार ॥७९॥
तब तिन ताकी आज्ञा पाय। कारागार डारियो राय ॥
अस्थि मांस दुर्गंध विशेष। ता करि सो भरि रह्यो निशेष ॥८०॥
दंस मसक आदिक जिय तहां। काटत तन सुखसाता कहां ॥
भव विचत्रताकर नृप यादि। रात्रि व्यतीत करी सुखवादि ॥८१॥
पूरव जन्म कमायो कर्म। ताको फल पायो में पर्म ॥
एकहि पारन पायो एम। दूजो कर्म बांधिये केम ॥८२॥
जाते जह भुगते ही छुटै। विना कष्ट जह नाहीं टरै ॥
इस भवमें कोई शत्रु न मित्र। यह तो जग थिति सदा विचित्र ८३
सुख दुखको कोइ नहीं दातार। पूरब निज कृति भोगनहार ॥
प्रानी शुभ और अशुभ बसाय। पावतु है सुख दुख अधिकाय।८४
इह विधि चिंतत भयो सुभोर। लागो चित्त धर्म की ओर ॥
तब नृप भील तासु ढिंग आय। पकरि ताहि बनमें लेजाय ॥८५॥
देवी मंदिर है इक जहां। वली कारने लेगयो तहां ॥
कहा कुसुंभक सुत जो भील। मृगया कारन भ्रमतु सलील ॥८६॥
तब तिन पांउ डसोजुभुजंग। ताकरि व्याकुल भयो सरवंग ॥
मूर्छा खाय धरनि में पर्यो। भीलनि तहां उठाय कर धर्यो।८७।
मूरछित ताहि लेगये तहां। पिता भील नृप बैठ्यो जहां ॥
देखि पुत्र गत प्राण कुसुंभ। हाहाकार कियो आलंभ ॥८८॥
तब कुसुंभ नृप पूछत भयो। कुमरहि वात भेद कहि दियो ॥
जो सत तुम में विद्या होय। सर्प बिषम विष टारन कोय ॥८९॥
तो हमें सुत की भिक्षा देहु। जो चाहो सो हम से लेहु ॥
ताको हम सों कहो विसेष। तो तुमरे मिट जांय किलेश ॥९०॥
तब वरांग तासों इमि कही। जह विद्या हम जानत सही ॥

सुनि संतोष लह्यो उन सबनु। ताहि छुटायो बंदी भवनु॥६१॥
तब तहां नदी शुद्ध जल न्हाय। धोतव वस्त्र पहिरे सुचिकाय॥
पढ़ि पढ़ि मंत्र पंच पढ़ि मंत्र। ले जल कियो कुमर वर तंत्र॥६२
यह धीरज जह विद्या सार। और ठौर कहुं नहीं अवार॥
याते हमरे पिता समान। राखि लियो हम बंश सुजान॥६३॥
सुवरन रत्न जड़ित आभरण। अंबर विविधि भांति रंग धरन॥
इतनी बात छांडि अह भेउ। लेहु कुमार तुम कृपा करेहु॥६४॥
भोजन करहु ग्रेह हम चलो। मन में सो कछु ल्यामें भलो॥
हम अपराध क्षमा सब करो। हम बन भील ज्ञान हम टरो॥६५॥
जो कछु हम दुख दीनों होय। क्षमियें हम पर गुनधर सोय॥
यह सुनि कुमर कहत गुण कूप। हम पर क्षमा करहु बन भूप॥६६॥
तुम अपराध कछू नहि होय। निज कृत कर्म देत फल सोय॥
एक दया हम पर तुम करो। गमन करन को संशय हरो॥६८॥
मारग शुद्ध देउ बतलाय। जिस विच हम पग धारे धाय॥
वस्त्राभरणन सों नहिं काम। सुखो रहो तुम आठो याम॥ ६॥
कुसुंभ भूप की आज्ञा पाय। मारग भीलनु दियो दिखाय॥
नाना देशनि को तिन तबे। जा बिच चल तव पंगहि फबै॥४००
दूर देश पहुँचाय नरेश। आये पलटि भील निज देश॥
अब युवराज तहां ते चलो। पायो मारग अति हो भलो॥१॥
चलत तहां होगई सांझ। ग्राम नर नहिं तसु बन मांझ॥
तब चढ़ियो इक तरु पर धाय। ताकी साख पकरि दृढ़काय॥२॥
थिरु हुइ कुमर चिंतवनु करे। सुख दुख जीव कर्म ते भरे॥
शुभ अरु अशुभ कमायो होय। तिस बिन भुगते छुटे न कोय॥३॥
कहां तो सुख पायो युवराज। कहां चढ़ो अब दुःख जिहाज॥

अश्व हरन को कारण पाय । महा सघन बन परियो जाय ॥४॥
कहाँ मृगपति गज ग्राह उपसर्ग । भयो मोहि छूटो जनवर्ग ॥
तहाँ ते पुनि भीलनि वश पर्‌यो । पुन्य उदय तहाँ ते ऊबर्‌यो ॥५॥
जह तो है जिन धर्म प्रभाव । और हेत नहिं मन में ल्याव ॥
एकाकी बन विकट मंझार । संकट परे बिविधि परकार ॥६॥
बिना जतन तें सब टरि गये । पूरब पुन्य उदै तब भये ॥
धर्म प्रभाव जानि यह सार । और न कारन है इह बार ॥७॥
दैव अधीन सुहावे आय । सुख दुख में सोई बने उपाय ॥
इह विधि चितवत निसि तम गयो । भयो प्रभात भान ऊदयो ॥८॥
तब तरु ते उतर्‌यो लखि प्रात । आगे मारग चाल्यो जात ॥
तहाँ बनजारे के जन आय । ऐक्यो तिन दुर्वचन कहाय ॥९॥
दया भाव करि रहित विचार । क्रूर कुबुद्धी आयुध धार ॥
कहाँ ते आयौ कहाँ को जाय । कौन नृपतिचर हमें बताय ॥१०॥
हेरतु कह बांछा तुहि कौन । मन में होय सो कहिदे तौन ॥
ऐसे तिन बच सुने नरेश । मन में कछुयन धर्‌यो अदेश ॥११॥
जो हो शक्तिवान हो सही । इन संग युद्ध करोगे नहीं ॥
हो क्षत्री कुल में उत्पन्न । जे बरांक मोकरि नहिं हन्य ॥१२॥
इस बन बीच पराक्रम करन । होइ न जन सराहना धरन ॥
वन हरि जल भीलन में जोय । भयो शरन सो ही यह होय ॥१३॥
सो सुकर्म मुहि रक्षा करो । यह बिचारि हिरदे में धरो ॥
इमि चितवन करि तिन सो कहे । कुमर वरांग मुहि रक्षा करो ॥१४॥
जो तुम्हें करने होय सो करो । कछु संदेह न मन में धरो ॥
ध्याय चरन जिनवर के जबै । नरपति मौन पकरियो तबै ॥१५॥
तब वे सार्थवाह चर जेह । सबनु विचार कियो मिलि ऐह ॥

यह नर दंड देन नहिं जोग । सुभग रूप कोई उत्तम लोग ॥१६॥
जाहि ले चलो निज प्रभु पास । गुन औगुन वे पूछें जास ॥
उचित जान सोई जु कराहि । ताते वेगि चलो ले जाहि ।१७।
सागरवृद्धि वनिकपति जहां । बांधि ले गये कुमरहि तहां ॥
सो सुंदर स्वरूप नृप देख । करतु विचार सु मनहिं परेष ॥१८॥
जह सामान्य मनुष नहिं होय । के नृप नृप-मंत्री है कोय ॥
ऐसे शुभ लक्षण तन धार । होइ न नर सामान्य अवार ।१९॥
के विद्याधर के अमरेश । मोहि ठगनि आये कर भेष ॥
अथवा पूर्व जन्म की प्रीति । आये प्रगट करन शुभ रीति ॥२०॥
मेरे नर अज्ञानि कहाहि । किह विध बांधि लियो बन माहि ॥
यह तो शक्तिवन्त देखिये । मौन गह्यो इन मन पेखिये ।२१।
पहिले इस सम्मान कराहु । पाछे संभाषण मन ल्याहु ॥
यह तो रीति सनातन आहि । इमि विचार करतो मन माहिं॥२२
निज समीप सो लियो बुलाय । मधुर वचन ते कहतु सुभाय ॥
मेरे चाकर रहित विवेक । तुमहि पकरि ल्याये लखि एक ।२३।
तुम आकृति देखिये वलवंत । तुम तो हो कोई पुरुष महंत ॥
इन तुम को बहुते दुख दियो । तुम अपनो बल प्रगट न कियो २४॥
सज्जन जन को यही सुभाय । नीचनु पर न ले निज दाय ॥
सो अपराध छिमा करो हमें । बारबार हम तुम को नमें ॥२५॥
उठो वेगि करिये असनान । करो कृपा करि भोजन पान ॥
निज कर सों कर गहि कर तासु । ले आयो जह जह निजआवासु
स्नानादिक क्रिया करवाय । दे तांबूल वस्त्र पहिराय ॥
कहतु भयो पुनि नृप सों बेन । बनकनि पुत्र श्रवन सुख देन ॥२७॥
सुन हे मित्र कुमर इम बरें । आज्ञा देउ और सो करें ॥

तब नृप कुमर कही सुनि साहु । हमरो तुम संग होहु निबाहु २८॥
तातें हम तुमरे संग चलें । मारग में सुख पावें भलें ॥
तब बनिक पुन तासों कहे । हम तुमको निज सङ्ग ले चलें २९॥
तिष्टौ अब तुम हमरे पास । करो यथोचित भोगविलास ॥

कवित्त सवैया ॥ २३ ॥

सो युवराज सबै सिरताज करै पर काज हरे दुख भारी ।
वांछित सिद्धि लही वर रिद्धि भई गुण वृद्धि सु जासु अपारी ॥
सज्जन को आस्वास करे अरु दुर्जन त्रास करें बल धारी ।
सो विधि योग सुराजरु भोग तजे निज लाग भयो वनचारी ॥

सवैय। ॥३१॥—सुर तिर्यंच नर नारक अशेष,
जगवासी जीव परे सदाँ कर्म वस आनिके ॥
कभी सुख कभी दुख भोगते अनेक भाँति,
बीतत है दिन रात यही विधि जानिके ॥
कर्मनु को पर फेर चलो जात हिय हेरि,
देखो बुध लोग यह निश्चय करि मानिके ॥
नर की अवस्था जैसे समै को विषय पाय,
सूरज को अस्त उदै होत जैसे भानि के ॥

(इति श्री वरांग चरित्रे श्रीमत महा भट्टारक बर्धमान विरचिते तस्य भाषायां कृतो श्री वरांगजी को अश्व हरनादि अवस्था प्राप्ति सागर वृद्धि सेठ से मिलाप वर्णन नाम पंचमः सर्गः ॥५॥)

अथ छठा सर्ग ।

॥ चौपाई ॥

तब सो सारथिवाह एक समै । निज वानिज संघ ले सुख रमै॥
तीर्थ चक्र हरि हलधर आदि।कहत कथा तजि सब वकवादि ॥३२॥
तहाँ फुनि गीत नृत्य वादित्र । बाजत सुंदर परम विचित्र ॥
सुन शब्द श्रवण सुखकार । बैठो सभा बीच गुणधार॥३३॥
तिस समय चाकर सब तने । आय जोरि कर इम बच भनै ॥
स्वामी सुनो हमारे बेन । जो तुम सबको सुख देन ॥३४॥
इक तो काल द्वितिय मह काल । भीलाधिप अति विकराल ॥
दो हजार भीलनु संग ल्याइ । आये तुमपर कोप कराइ॥३५॥
तिन सुनि शब्द सेठि तिहिं ओर । निज सामंतनि लियो हुङ्कारि॥
सजि सजि आये तहाँ सकल । सेठि जहाँ बैठो है विकल॥३६॥
और वनिगवर संग हैं जिते । नाना विधि आयुध ले तिते ॥
तोमर कुंत खडग त्रिसूल । कर गहि आये निज प्रतिकूल॥३७॥
और गदाजु खेट करवाल । जिन प्रचंड भुजदंड विशाल ॥
ते भी आये निजपति पास । मनमें युद्ध करन की आस॥३८॥
दोहा—चढ़ो युद्ध करने तबै, सेठि सङ्ग ले सेनि ॥
जाय खड़ो रनभूमि में, युद्ध करन की आस॥३९॥
आये सन्मुख सेठ के, युद्ध करन दर हाल ॥
तिनि सुनि शब्द प्रचंड दोऊ, भोल काल महकाल॥४०॥
खेंचि वान तब कान लगि, करते मारहि मोर ॥
हस्त धनुषधारी सबै, स्याम वरन विकराल॥४१॥
दोऊ सन्मुख सेनि भई, वजे निशानु अरु ढोल ॥

भेरी रन सिंहा तबै, करत शब्द घन घोल ॥४२॥

॥ भुजंगप्रयात छन्द ॥

भयो युद्ध भारी दुहू सेनि माँही ।
लरे सूर दोऊनि के सुद्धि नाहीं ॥
गहे हाथ हथियार तीच्छन सबेही ।
दुहु सैनिके सूर गर्जे तबेही ॥ ४३ ॥
केई खड्ग भेद केई युद्ध करते ।
लगे घाव तन में रुधिर पुंज झरते ॥
मनो पर्वतोंते झरे नीर धारा ।
लसे गेरिका खानि मिश्रित अपारा ॥४४॥
केई इक बानजौ में रुधिर रङ्ग रागे ।
मनो कानने चैत्र पालास जागे ॥
केई खेंचि के कानलों वाण छोड़े ।
किरातान के नर भरें अग्र गोडे ॥४५॥
तिन्हें मारने को वणिक वान साधे ।
सो तो अर्धचंद्रानि करि बीच बांधे ॥
इते चक्रव्यूहे गरुड़ व्यूह उत है ।
रचे दोऊ सेनानि में ऊह पूहे ॥४६॥
दुहू व्यूह के योध क्रोधाग्नि जारे ।
भिरें घात खाते टरै नाहिं टारे ॥
केई हाथ किरपान ले ले लड़े हैं ।
तिन्हों के मुकटि भूमि में सिर पड़े हैं ॥४७॥
कई तो गदा घात करि चूर्ण गात्रा ।
पड़े त्रास सहते न है कोई त्रात्रो ॥

कैई खड्ग भिन्ना कैई वान छिन्ना।
परे भूमि संग्राम कीमें अगिन्ना ॥४८॥
कोई सूर भागे तिन्हों से पुकारे।
कहां जाउगे अग्रते तुम हमारे ॥
आए क्यों यहां युद्ध कारन सु सजिके।
किते जाउगे स्वामि को सङ्ग तजिके ॥४९॥
इसी बानि सुनि फेरि सन्मुख धाये।
तिन्हों खङ्ग ले काटि सिर भूमि गिराये॥
नचें रुंड तिनके कटे मुंड जिनके।
महा भीतिकारी भये कातरनि के ॥५०॥
केई हाथ हथियार तजि सूर लरते।
परस्पर सुमुष्टि प्रहारान करते ॥
गहे केश अन्योन्य शिर के सरोषा।
भिड़े वीर जिन गात घृत क्षीर पोषा ॥५१॥

दोहा-इह विधि दोनों सेनि बिच, भयो युद्ध अधिकाय ॥
महाकाल अरु काल दोऊ, भील तबै उठि धाय॥५२॥
धनुष धरैं कर शबर दोऊ, तीक्षन बान चलात ॥
आछादन कीनों सकल, गगन पंथ दोऊ भ्रात ॥५३॥

पुनः भुजग प्रयात।

भिड़ें वीर दोऊ धरैं धीर नाहीं।
करैं मारु भारी न पीछे हटाहीं ॥
बहुत संग जिनके धनुषवान धारी।
सुहैं भील योधा महा भीतिकारी ॥५४॥
बढ़े आवते सन्मुखे युद्ध करने।

भगे सेठि योधा डरे जानि मरने ॥
केई कंप माना तजें हाथ वाना।
खडे भूमि में करि सकें नापयाना ॥५५॥

दोहा।

तब ही सागरवृद्धि सों, सेठि सैन निज देख ॥
भागन लागी चहुंदिशा, चिन्ता करतु विशेष ॥५६॥
हम वानिकवर वणिज के, करन महा गुणधार ॥
कहा जाने भीलनि सहित, युद्ध करन इहवार ॥५७॥
विन कारन बैरी भये, हम पर कीन्हो क्रोध ॥
दया हीन चांडाल सम, हैं सब शबर विरोध ॥५८॥
कहा करैं कहां जांय हम, त्राना हम नहिं कोय ॥
यह विधि करत विचार तब, खेद खिन्न अति होय ॥५९॥
तब बरांग नृप सेठि को, चिन्तातुर पहिचान ॥
बैठो तो निज पास सो, बोल्यो निज मुख बानि ॥६०॥
तुम बनिये हो जाति के, कहा जानो रन रीति ॥
उन किरात बलवंत अति, क्यों करि पावो जीति ॥६१॥
इस विधि कहि तिन सो तवै, उठियो राजकुमार ॥
सिंह सदृश विक्रम धरन, गाजन अति भयकार ॥६२॥
पाद घाति करि शवर इक, डारि दियो तब भूमि ॥
षड्ग तासु कर ले लियो, चलो अग्र तसु घूमि ॥६३॥
चहुं दिशि खड्ग फिराक्तो, सव सव तजि रन सूर ॥
जाय काल ऊपर तवै, बहुतनि करि चूर ॥६४॥
काटि कुमर सिर तासु को, कीनो तब बहु मार ॥
भागि सेन वन में गई, भीलनि की तिहिं वार ॥६५॥

इह विधि करि ताकों तबै, देखि सेठ बलवन्त ॥
निज मन में जानो तबै, है कोई सूर महंत ॥६६॥

चौपाई ।

इमि चिंतवन तब करतो सेठि । निज लोगनि सम इक थल बैठि॥
यह तो महापुरुष है कोय । निजबल प्रगट करत नहिं लोय॥६७॥
हम जानैं नहिं जाको नाम । को कुल जाति कौन इम ग्राम ॥
कहांते आयो कहां जह जाय। किस कारन भ्रमतो वन आय॥६८॥
हम संग में रहतो किहि हेत। जानो जातु बड़िन को चेत॥
यो उपकार बड़ो इन कियो। भीलनितैं बचाय इन लियो॥६९॥
प्रति उपकार कहा इस करौं। अब किस विधि जातैं उद्धरौं॥
सेठि करत मन यही विचार। बैठो तहां गजराज कुमार ॥७०॥
तब तक आयो सो यहकाल। मार्‌यो कुमर जासु को बाल ॥
कोप धारि मन में परचंड। कहतु भयो नृप मे बलवंड ॥७१॥
कहां जायगो मो सुत मारि । इक छिन में तोहि मारूं डारि ॥
वेगि जमालय को पहुँचाय। और अधिक अब कहा कहाय॥७२॥

॥ छन्द कड़खा ॥

शवर महा काल ने बांन छोड़े तबै,
तीक्ष्ण मुख जाय नृप तन विदार्‌यो॥
लगे बहु बान घमसान करि कुमर,
तिस खड्ग करि काटि सिर भूमि डार्‌यो॥
भयो वह मरन वस शवरपति,
तिहि समैं भागि सेना गई चहुं दिशा में॥
तासु युवराज करि घात मूर्छित,
परयो जड़ रूप उस भूमि ठामैं ॥७३॥

दोहा—तब पुलिंद सैना सकल, भागत लखि सो सेठि।
जय बाजे बजाय करि, चलो भूमि रन पेठि ॥७३॥
निज परलोकन देखने, कारन रन भुय माहिं।
तब तहां देखि बरांग को, मूर्छित तन उस ठांहि ॥७४॥
बान घात भेदो सकल, अति तन तासु विलोकि।
राजकुमार मुख निरखि तब, सेठि करत तब शोक ॥७५॥
हा सुत तुम किहि कारने, आये इस वन थान।
हमरे प्राण उबारने, खोये अपने प्रान ॥७६॥
धर्म बड़ो संसार में, जो पर काज कराय।
निज तन धन सब त्यागि कें, परहित चित्त लगाय॥७७॥
धीर वीर महापुरुष तुम, अरु तुम सम नहिं कोय।
पर उपकारी जगत में, और न दूजो होय ॥७८॥
भील महा धन लोलुपी, आए हम धन लेन।
मारि भगाए तुम सबै, धारी तुम कछु भै न॥७९॥
हम सों बोलो बोल इक, अब इस विरियां वीर।
हम व्याकुल तुम बचन बिन, क्यों कर धारें धीर ॥८०॥
हा बचनामृत वारिधर, हा शीतल-मुख-चन्द्र।
हा विद्यानिधि गुण मही, हा जग आनंदकंद॥८१॥
नेक उघारो नैन युग, कीजे हमरो गौर।
दया भाव उर धारि के, चितबो हमरी ओर ॥८२॥
बहुत रुदनि करि सेठ जो, तिस गुन मन समझाय।
चिंतातुर मन विकल अति, हुई दुखित अति काय॥८३॥
चंदन युत कपूर जुत, शीतल जल ले हाल।
ता करि सींच्यो तासु तन, उठो कुमर तत्काल ॥८४॥

॥ चौपाई ॥

तुम चिरजीवो सुत गुन धार। सुखी होहु तन मन अधिकार।
बार बार आशिष दे ताहि। सुमिर सुमिर उस गुन मन मांहि॥८५॥
तब उठाय मन करि बहु त्रास। सेठि लेगयो निज आवास।
घायल तसु तन लेपितु रुधिर। उदन नीर करि धोयो सुथिर।८६।
वटी रोहनादिक द्रवि लाय। तासु सकल तन लेप कराय॥
थोरे दिननु बीच तनु तास। भयो निरोग जोग शुभ जासु॥८७॥
तब तसु सेठि कियो सनमान। वस्त्राभूषण भोजन पान॥
दे कर विनती करत वहोरि। बार बार निज दोऊ कर जोरि॥८८॥
तुम कीनो हम पर उपकार। ऐसी कौन करें हम सार॥
तुम सम हितकारी नहिं और। हम सबके तुम हो सिरमौर॥८९॥
सब जीवनि की रक्षा कारन। क्षत्री धर्म धरत दुष्ट हारन॥
सेठि कस्यो तब मनहि विचारि। कीजे जाको प्रति उपगार॥९०॥
सुवर्ण कोट रतन इक लाख। भेट कियो तिस आगे राख॥
ल्यायो देख सेठ धन भूरि। कहतु बचन मनु जावन मूरि॥९१॥
तात हमें नहिं धन अभिलाष। हम पर स्नेह सदा दृढ़ राखि।
धन करि अधम पुरुष सुख पाहि। उत्तम नर निज यश को चाहि।९२।
मध्यम दान मान करि सुखी। नर अधमाधम दुहु करि दुखी॥
अति उदार ताके सुनि बैन। जो अति सदा श्रवन सुख दैन॥९३॥
सेठि भयो अति हरषित गात। उमग्यो मोह हिय न समात॥
जब निरोग तन भयो निदान। जा दिन कुमर किये असनान॥९४॥
ता दिन सेठि दान बहु दियो। जाचक जननि अजाची कियो॥
तब पुनि सेठि जु मनहिं विचारि। निज पत्तन चलने मन धारि॥९५॥
कुमरहिं पालकि करि असवार। और सकल लोगनि ले लार॥

शुभ दिन घरी महूरत साधि। पंच परमपद मन आराधि ॥९६॥
वनिज नाथ चालौ वन छोड़ि । ले धन अधिक लाख और कोड़ि ।
थोरे दिन में पहुँचो जाय । निज पुर शोभा अधिक राय॥९७॥
नाम ललितपुर है वर जासु । कहि शोभा कवि वरने तासु ॥
तहां सो सेठि पहूँचो जाय । कुमरहि सहित बहुत हर्षाय॥ ९८
तादिन पुर उत्सव बहु भयो । पुर प्रवेश जादिन उन करयौ ।
नर नारी मन हर्षित होय । घर घर मङ्गल गावे लोय ।.९९॥
सागरवृद्धि सेठि ।नज गेह । लेगयो कुमरहि उर धरि नेह ।
प्रथम सेठि की आज्ञा पाय । तहां सेठानी पहुंची आय।।५०० ॥
सुवरण थारो अर्घ संजोय । करति कुमरि की आरति सोय ॥
मोर्गश्रम निबारन काज।सेठि कियो तसु सरस इलाज ॥१॥
स्नेह अभ्यंगन अंग कराय । उदनोदक अस्नान कराय ।
चंदन लेपन करि तसु अङ्ग ।भोजन करवाये निज संग ॥२॥
षट् रस अरु व्यंजन पकवान । ता पीछे इलाइची पान ।
दे करि वस्त्र सुगंध लगाय । रतन जड़ित भूषण पहिराय ॥३॥
कर गहि कुमर ल्याय निज सभा । बैठारयो तन वारन प्रभा ।
अति उर प्रेम बढ्यो तब ताहि ।निरखि कुमर मन अति हरषाय॥४॥
सेठि बचन पुनि भाषत तास । हे सुत जह तुम्हरो आवास ।
तुम मो सुत माता तुम एह । जह जानों तुम निसंदेह ॥५॥
जे तुमरे भाई वर वीर । तुम आज्ञा पालन हैं धीर ।
करौ पुत्र नित पूजा दान । पर उपकार सुजन सन्मान ॥६॥
पालौ धर्म जिनेश्वर सार । भोगौ भोग विविधि परकार ॥
और ठौर मति जाओ वीर । तिष्ठौ हिय जानत पर पीर ॥७॥
होउ प्रसन्न दया चित धरौ । दीर्घ काल हम पालन करौ ।

इह विधि मधुर बैन सुन तासु। कुमरहि बाढ़ो अधिक हुलास ॥८॥
सेठ वचन करि अंगीकार। वास कियो तिह गृह तिहि बार ॥
यह तो कोई महाभट सूर। कीने अरि सबहि चकचूर ॥९॥
वन बिच भील महा विकराल। जीत लियो छिन में समकाल
तातें कश्चित्‌भट इस नाम। धारियो पुरवासिनु मिलताम ॥१०॥
एक समय वानिक जन जेह। ललितपुरी के बासी तेह।
सब मिल सागर वृद्धि समेत। कुमरहि लेचाले बन खेत ॥११॥
करिविचारि सब ही मन मांहि। कश्चितभट कोव्याह करांहि॥
उपवन देखि खुशी मन होइ। यथा योग्य बैठे सब लोइ ॥१२॥
उच्चासन बैठो जु कुमार। सेठि वचन सु कहत उदार ॥
सब वानिक जन प्रेरित सोय। कश्चित भट सुत सो इम जोय ॥
हे सुत जे वानिक परधान। तुम सो विनती करत निदान।
हमरी है पुत्री गुन गेह। तिन को तुम व्याहो धरि नेह ॥१४॥
इम सुन सेठ वचन नर पाल। तासो बचन कहतु दर हाल ॥
स्त्री परिग्रह तें पूरो परो। अरु चाहों सो ही उच्चरो ॥१५॥
तब ही सेठि बहुरि बतलात। और सुनो तुम हमरो बात ॥
सब वानिक पति हो तुम सही। सबहुनि के मन इच्छा यही ॥ १६॥
इम सुनि सेठ वचन नरनाथ। अङ्गीकृत करियो गहि हाथ॥
तबहिं सेठि आदिक वानिये। हर्षित भये सकल निज हिये ॥१७
पट्ट तासु सिर बांध्यो सबनि। बीच ललाट देश अति रमन ॥
सब वानिकपति सरदार। सुख सू रहत वरांग कुमार ॥ १८
पुरी ललितपुर कियो निवास। करतो नित नित भोग विलास १९

॥ कवित्त तेईसा ॥

जो नृप को सुतनाम वरांग, भ्रम्यो बन बीच महा दुख धारी।

पूरव पुन्य विपाक को कारन, पाय भयो सुख को अधिकारी ॥
सो सामानिक में नर उत्तम मूरति जासु लसे मन हारी ।
आयु पराक्रम के वश ते जग फैल रही जिस कीरति भारी ॥२०
जे श्रुत सागर पार भये जन ते उपकार करें परकेई ।
शुद्ध अचार चरें निसि वासर शील सदा दृढ़ पालत जेई ॥
जाति सुवंश सुवास महाजन राधन जोग्य लहें पद तेई ।
तो कहा चित्र धरो मन में जन सज्जन रीति इसी वर नेई २१

॥ छप्पय छंद ॥

विबुध सदसि भयो पूज्य जीतिये कांत वादिवर ।
युवतिन नयन प्रिय रूप सुभग तन धारत रुचिकर ॥
है विराग जिस चित्त भुजन बल करि अरि जीते ॥
बिमुख होय ते गये शबर आयुध कर रीते ॥२२॥
ज्यों ललितपुरी विच वीर वर कश्चिद्भट जिस नाम हुय ॥
जे बन्तो वर्त्ती सो सदां कमल नयन वरांग तुय ॥२३ ॥

॥ गीता छन्द ॥

वन बीच जो नर फिरे अथवा दूर देस गमन करे ।
रन मांझ वैरिनु घेरे बच तहां निरविघन तन ऊबरे ॥
जो पुन्य पूर्वकृत सर सुर असुर पूजित व्हे भलो ॥
सो भुवन व्यापति कीर्ति मृगपति सम अरिन गज मद मलो ॥२४

इत श्री वरांग चरित्रे श्रीमत भट्टारक वर्धमान विरचिते तस्य भाषायां श्री वरांग कुमारस्य ललितपुर प्रवेश वर्णन नाम षष्ट सर्ग ॥ ६ ॥

अथ सातवां सर्ग ।

॥ दोहा ॥

श्रीमज्जिन चौबीस को, नमन करौं कर जोरि।
ग्रन्थ मध्य मङ्गल करन, बिघन हर सु वहोरि ॥१॥

॥ चौपाई ॥

इस आगे सो वर्णन करौं । जब वरांग तुरग करि हरयो ॥
गज बाजीरथ पयादे घनै । धोवत तिस पीछे अनगिनै ।२॥
पहुँचि न सके तासुके संग । सु तो पवन सम भयो तुरङ्ग ॥
पलटि आप पुर पहुंचो तबै । खेद खिन्न तन व्याकुल सबै ॥
आय राज मंदिर सु वहोरि । नृपं सों अरज करत कर जोरि ॥
वायु वेग वाजी कर भूप । हरयो कुमर तुम मयन स्वरूप ॥४॥
दुष्ट विपर्य्यय शिक्षा पाय । कुमरहि तुरग हरयो इस भाँति ॥
देखत देखत सब जन ताँहि । दृष्टि अगोचर भयो बन मांहि ।५॥
दैत्य रूप हय आयो कोय । के कोई विद्याधर ही होय ॥
करि प्रपंच सुत हरि ले गयो । काया मई रूप हय ठयो ॥६॥
तिन के वचन सुनै जब राय । परयो भूमि तल मूर्छा खाय ॥
चन्दन द्रवकरि सीचों गात । ताड़ बीजननु ढोगे वात ॥७॥
ता करि भयो सचित्त नरेश । उठि करि रुदन करतु दुर्भेस ॥
हा गुण उदधि पूर्ण मुखचन्द । हा पित मात सुजन सुख कन्द ८
हा सुत भोज वंश कुल मुकट हा परमागम कोविद प्रगट ॥
हा शशांक समजस परकास । हा मनहरन वचनमुख भास ॥६
हा महा पुत्र महा बड़ भाग हा मुख दर्शक रन अनुराग ॥
हा सुत प्राणनु के रखपाल । हमहि छांडि कहां गये दरहाल ॥१०

अब हम कहा करें कित जांय । तुम बिन छिन साता न लहांय
किसको आश्रय करिये अबै । तुम बिन शून्य भुवन भयो सबैं ।। ११
निरालम्ब भयो निर आधार । तुम बिन शून्य सकल संसार ।।
मेरो भाग्य हीन ह्वै गयो । काज अकाज रूप परनयो ।। १२ ।।
दूरि गये बरांग सुत तोहि । विधि वांचित गति मति भई मोहि ।।
कहां गये तुम सुन युवराज । एक बचन मोहि दीजे आज ।। १३
हा हय कहां ले गयो तोहि । बन विकराल कहां थिर होय ।।
दूर देश प्रापति किय तुमै । नाना वन थल मैले घुनै ।। १४ ।।
गर्त अन्ध कूप विच डारि । के वहु भीलनु डारो मारि ।।
इन विधि विलपत लखि भूपाल । सकल सुजन रोवत तिहुं काल १५
हाहाकार नगर में भयो । सो कुछ मोपे वरनों न गयो ।।
इतने में मंत्री तहां आय । नाम अनंतादिक दुख पाय ।। १६ ।।
कहत नृपति सों ते इमि वेन । पन प्रजुष्य करे कुछ है न ।।
खेद करे कोई सरेन काज । धीरज मन धरिये महाराज ।। १७ ।।
तुमहि शोक करते सब सुजन । शोक करैं सब जनपुर भवन ।।
कोइक पूरब वैरी आय । हुइ हय रूप हरलियो ताहि ।। १८ ।।
दूर देश कुमरहि ले गयो । वहु वैंरि तिन तिन दुख दीयो ।।
अथवा मन में द्वष धराय । मंत्री दुष्ट कियो कुछ उपाय ।। १९
राज उथापन कारन कोय । रजियो कपट विकट जिय जोय ।।
दीरघ आयु पुत्र तरो सही । अल्प मरन वस ह्वै है नहीं । २०
कोईक काल वितीते आय । पुत्र तुम्हें मिलिहें सुखदाय ।।
ऊंचो गोत्र कुल नहि अवतार । थांपत अल्प आयु केधार ।। २१
जीवत पुरुष मिलै फिर आय । सुकृत गुनधारी वर कोय ।।
गमन करत आवत फिर सोय । जाको पुन्य सहाई होय ।।२२।

अल्प पुन्य जिय मरनहिं खाय । ते पुनि घर किमि आवें धाय ॥
आवे आ मंडल परदुमन । हरि गये फिरि आये निज भमन॥२२॥
ताते धीरज धरि महाराज । सुस्थ होय कीजे शुभ काज ॥
शुभ अरु अशुभ कर्म के जोग । सुखी दुखी होवें सब लोग॥२३॥
इस विधि नृप संतोषो सोय । मंत्रिन करि थिर भयो जु होय ॥
तब तक गुनदेवी वृतांत । सुनतहि विकल भई उर अन्त॥२४॥
मूर्छा खाय धरनि पर परी । तब शीतल जल सीची करी ॥
चन्दन द्रव कपूर मिलाय । ताड़ वीजना ऊपरि डुलाय ॥
ता करि हुइ सचेत तन तवे । उठि विललाप करति मुख जवे ॥
हा वरांग सुत तुम मुहि छांड़ि । कहां जाय बैठे हठ मांड़ि ॥२६॥
तुम्हे तुरग कित ले गयो वीर । तुम तो कोमल वाल शरीर ॥
कौन दिशा तुम प्रापति भये । कौन कौन दुख तुम सुत सहे ॥२७॥
दुष्ट तुरग हरि ले गयो तोहि । कौन दशा कहां प्रापत होय ।
अटवी विचि गिरि गह्वर थान। डारि दियो किम अश्व महान॥२८॥
के तव वेखित वनि विच डारि । तहां तृण कंटक तनहि विदारि ॥
क्योंकरि दुःख सहे तुम एह । तुम सुख पालित कोमल देह ॥२९॥
हा सुत! कहां देखों अब तोहि । हासित वदन दर्शन दे मोहि ।
चित संभाषन कासों करों । तुम बिन किम प्राणनको धरों॥३०॥
हा मम उदर सरोवर हंस । हा मम नयन कमल रवि अंसु ।
हा मम प्रेम उदधि शशि रूप । हा वांछित पूरक गुन कूप॥३१॥
आव आजु सुत मेरे पास । मो दुःखिनि पूरी करु आस ॥
तो दरशन विन इक छिन प्रान । राखन समरथ नांहि निदान॥३२॥
मधुर स्वादु मय भोजन अवै । तुम विन लागत विष वत सवै ॥
पानी दुग्धादिक सब वस्त्र । पेय अपेय भई जु समस्त ।३३॥

कोकिल चक्रवाक बालाक । इन सुत बिछुरनु कियो वराक ।
पूरब जन्म करम जह ठयो तिह फल मो सुत बिछुरन भयो ॥ ३४ ॥
इह बिधि करत विलाप सु मात । सुत वियोग रुंताप्ति गात ।
अतिहि रुदन करति सुनारि आई सासु पास दुख धारि ॥ ३५ ॥
सब विलोपन लागी तिसथान । ताको अब कुछ करों बखान ॥ ३६ ॥

॥ चाल सावन की में ॥

प्रान नाथ तुम कित गए, हम घर भयो है मसान ।
तुम विन ब्याकुल सकल तनु, किहि विधि राखें प्रान ॥ प्रान० ॥ ३७ ॥
हां, गुनसागर चन्द्रमा, हा कनक द्युति देह ।
हा, हम नेत्र सरोज रवि, हम किम तजो सनेह ॥ प्राननाथ ॥ ३८ ॥
हा शशांक जलि राशिधर मृगपति सम बल धारि ।
सत्रु कुमुद संकोच करि रवि सम तेज तुम्हार ॥ प्राननाथ ॥ ३९ ॥
मानिनि मानस सर विषे करन हंस समवास ।
तुम बिन छन इक जीवतन करिनहिसकहि निवास ॥ प्राणनाथ ॥ ४० ॥
ज्यों जल बिनु मृग मीन छिन थिर नहि रहतु निदान ॥
त्यों हम तुमरे दर्श विनु किस विधि राखें प्रान ॥ प्राननाथ ॥ ४१ ॥
वस्त्राभूषन असन जल अरु शैय्यासन पान ।
स्नान बिलेपन तुम बिना दुख दायक सब जान ॥ प्राननाथ ॥ ४२ ॥
सुकुल रूप गुन को तथा हमरे इस संसार !
तुमहि दूर देशहि गये जीवन को धिक्कार ॥ प्राननाथ ॥ ४३ ॥
ए विधिना मैं क्या करूं कीनो हम क्या विगार ।
जो पति विरहानल विषे डार कियो तन छारि ॥ प्राननाथ ॥ ४४ ॥
इस विधि तहां नारी सकल बिलपति दुःखित गात ॥
सुनि गुन देवी सासु तिन आई रुदन करात ॥ प्राननाथ ॥ ४५ ॥

हृदय ताड़ती मुष्टि करि लोटति भूमि मझार ॥
निरषि निरषि भूपाल मुख रोवति अति मुख फारि ।प्राननाथ॥४६॥
हा पति गुन वत्सल प्रभू ! हा शशांक यश धार ॥
तुम सुत क्यों हय हरि गयो, नाम वरांग कुमार ।।प्राननाथ॥४७॥
छत्री नाम कहे तुम्हें, छिति रच्छा करतार ॥
पंडित जन गुन देख के भाषत नाम विचार ।।प्राननाथ।।४८॥
सुत रच्छा क्यों ना करी तुम देखत दृग जोय ॥
क्यों करि हय हरि ले गयो यह अचरज है मोय ।।प्राननाथ॥४९॥
पुनि ससुरहि देषत सवे जे वरांग की नारि ॥
रोवति सिरु अति ढोलि के तन की दशा विसारि॥प्राननाथ॥५०॥
देखो सुसर बिचारि के तुम छिति पालक नाम ।
पालन सुतकी ना करी इम भाषित तेथान प्राननाथ ॥५१॥
छेम करत छितिपति तुमें छत्री नाम धराय ।
पति हमारो वाजी हरो किम रच्छा न कराय ॥प्राननाथ ॥५२॥
पति वियोग की अग्नि सों संतापित सत पूरि ॥
कहां जाँऊ कासो कहों । कौन कहो दुष भूरि॥प्राननाथ॥५३॥
बंधुलोग मनहरन जो हम जीवन रछपाल ।
दर्शन आप दिखाइयो ताको हमहिं गुनाल ।।प्राननाथ ॥५४॥
नांतरु प्रान तजें हमीं ससुर सुनो हम वानि ।
यह निश्चय करि जानिये मन संदेह न आनि ।।प्राननाथ ॥५५॥
दान भोग उप भोग बिच अंतराय जो कर्म ।
बंध किये पर भो तुमीं उदै देत रस पर्म ।।प्राननाथ ।।५६॥
कौन देश कहां ले गयो हर हरि तुम भर्तार ।
मोसुत प्राणनिते अधिक प्यारो राजकुमार ।प्राननाथ ।।५७॥

तब तक तुम कैसे रहित जब तकि खबरि न आय।
बहू सासु अस्वास करि नृप तब धीर धराय। प्राननाथ॥ ५८॥
आप सभा मंडप तुरत बैठो चित्त उदास।
मंत्री लिये बुलाय तब बैठारे निज पास। प्राननाथ॥ ५६॥

चौपाई॥

हे मंत्री विचार तुम करो। किन बैरी सुत मेरो हरो।
सुनि मंत्री नृप बचन विसाल। दूत बुलाय कहो तत्काल॥ ६०॥
विलम करो मति तर्तहिं जाहु। वेग वरांग की खबरि ले आहु।।
ते चलि दूर गये चहुँ दिशा। गिनीन तिन दिवस अरु निशा। ६१।
जिसदिशकोंहय हरि लेगयो, कुमरहि तिसदिशि इक नगरहि गयो।
नदी सरोवर वन मंझार, ढूंढति फिरयो विविध परकार॥ ६०॥
जिस मारग हय निकस्यो सोय, तिस ही मारग आवति जोय।
तहां देखो मुक्ता फलहार, टूटी लर उरझी तरु डार॥ ६१॥
तहां ते आगे को जो जाय, कुंडल कटि मेखल भुव माँहि।
पटी देखकर ग्रहन कराय, फिरि तहां तें आगे को जाय॥ ६२॥
कूप परचो बाजी अंपान. खड़े भये कोई इक थान।
भूषन वसन हाथकर लये, पलटि पलटि ग्रेह चलने पड दये॥ ६३॥
कूप मध्य हय मृतक निहारि, चले खबरि ले तुरत मम्झारि।
नहिं युवराज देखियो तहां, आये सबे भूप हैं तहां॥ ६४॥
भूषन वसन तुरंग पलान, आय दिखाए नृपति अमान॥ ६५॥

दोहा।

निरखि कुमर भूषन वसन, धर्मसेनि निरपाल।
दुगुन शोक करतो तबे, परयो धरन बेहाल॥ ६६॥

चालि छन्द।

उठि रुदनु करत तिहि वारा, मन में धरि दुःख अपारा॥
नृप वार वार सिरु धुनतो नहिं वचन किसी को सुनतो॥६७॥
तहां लेत दीर्घ उस्वांसा, जीवनि की धरतु न आसा॥
हा कुमर वरांग हमारे, तुम प्राणन हू ते प्यारे॥६८॥
कहां ले गयो दुष्ट तुरंगम, वन जंतुन को कियो संगम॥६९॥
वन मांझ प्राण निज त्यागे, हमरे अभोग वहु जागे॥
धृग धृग हम पौरुष सारा, धृग धृग दल वल जु अपारा॥७०॥
वैरी जन हांसी करि हैं, सुनि श्रवन हियो दुष भरि हैं॥
यह विधि निर्दई अपारा, कहां पाप बीच मुहि डारा॥७१॥
कुमरहि दुख दारुण दीनों, जह काम कहां ते कीनों॥
हा कुमर कहां तुहि देखों, तेरो मुख दरश विशेखों॥७२॥
मुहि छांड़ि कहां गयो प्यारे, मुहि दरशन देहु सवारे॥
इहि कहि नृप अति विलपातो, धीरज छिन नाहि धरातो॥७३॥
मंत्री जन सव मिलि आये। नृप पास तवै वैठाये॥
कर जोरि नृपतिसों कहते। निज स्वामी भक्ति उर वहते॥७४॥
प्रभो शोक नाहि अव कीजै। याते काया वहु छीजै॥
तुम प्रभु करते शोका। तव करे सोक सव लोका॥७५॥
वहु शोक करत अज्ञानी। जे महा मूढ़ मति प्रानी।
सो कहिते ज्ञान नसाते। फिर दुर्गति में पहुंचाते॥७६॥
ताते शोकहि तजि दीजे। यह अरज मानि हम लीजे॥७७॥

चौपाई॥

पूरब कर्म कमायो जोय। सोई दुख दुख दायक होय॥

जामें कहा हरष विषाद । कर्मनि की गति है जु अनादि ॥७८॥
सकल शास्त्र के जानन हार । पर संबोधन के करतार ॥
कर्मन चरित जानते भूप । क्यों करि खेद परो भव कूप ॥७९॥
खेद करें कोई काज न सरे । खेद करें नृप विपति न टरै ।
एक अवस्था जाति न सदा । जग जीवनिकी जिन जह वदा ॥८०॥
शठ सिरु उर पीटे विललाय । सोक न तजे चित्त विलखाय ॥
जे विवेक धरि नर संसार । दुख में तिनि के धर्म अधार ॥८१॥
धर्म अधर्म विवेक विचार । करो चित्त में नृप इह वार ॥
तुम तो चतुर विचक्षन राय । सुख दुख सम भाव धराय ॥८२॥
विपति परै धीरज चित धरै । समर भूमि बिच साहस करै ॥
दान समै उदारता गहे । ध्यान बीच ज्ञान नहिं सरदहे ॥८३॥
उत्तम पुरुषन की यह रीति । सुख दुख में धर्महि सों प्रीति ॥
संबोध्यो राजा इस भाँति । मंत्रिन करि तब किय दुषभाति॥८४॥
थिर छिन ह्वै जिन गृहकों उठ्यो । गयों नृप पुत्र बधुन करि गुठ्यो ।
निज भार्या संग ले करि तबें । तीन प्रदच्छिणा दीनी प्रभें ॥८५॥
नमस्कार करि वारंवार । पुनि मुनि चरणनु चित्त धारि ॥
मुनिपद अग्रभाग बैठियो । धर्म भेद तब नृप पूंछियो ॥८६॥
तब मुनिवर भाषत ये धर्म । जो कुछ कह्यो जिनेश्वर पर्म ॥
जीव अनादि भ्रमत संसार । लख चौरासी जोनि मँझार ॥८७॥
मोह मत्त वश तजि शुभ रीति । विषय कषायनि सों कर प्रीति ॥
जो पूरब उपराजो कर्म । तो फल भोगतु परम असर्म ॥८८॥
पुत्र मित्र दारादिक सर्व । मानतु निजाधीन करि गर्व ॥
तिन के अर्थ उपार्जन वित्त । करतो सदां विकल भयोचित्त॥८९॥
दैव योग धन संपति लही । भोगतु भोग अथिर जे सही ।

पुत्र कलत्र विजोगहि भये। अतिये दुख दायक अधिकये ॥९०॥
निति के मोह करत बहु क्लेश। ताते भव भ्रमते बहु भेस ॥
सो सब जानि मोह को ख्याल। समुझि देखि मन में भूपाल ॥९१॥
करि अनराय धर्मांजन करत। तिस फल की लौ जिय दुख भरत ॥
निज कुटुम्ब के पोषन काज। चढ़त आप जिय दुःख जिहाज ॥९२॥
एक पुरुष गृह पुन्यी कोय। तिस आश्रित सुख भोगति लोय।
जब दुख परै तासु को आय। तब कोय नहिं तिस करत सहाय ॥९३॥
वैरी मित्रनि कोई कासु। जग में दोष दीजिये तासु।
शुभ अर अशुभ कामके जोग। सुख दुख भोगत हैं सब लोग ॥९४॥
ज्ञानी ममता धारत सही। सुख दुख बीच मुनीश्वर कही ॥
ताते सुन वियोग दुखराज। तजि निजि करो सकल शुभकाज ॥९५
राजा सुनि मुनि वचन रसाल। शांतिचित्त कीनो दर हाल ॥
पुत्र वधू युत सब परिवार। आयो राज महल गुनधार ॥९६॥
राज भवन विच एक प्रदेश। करवायो निज गृह सु नरेश ॥
ता विच श्री जिन प्रतिमा सार। थापी पूरव मुख सुषकार ॥९७॥
तहां त्रिकाल पूजा नित करत। दान शील तप में मन धरत ॥
तबै वधूनसों भाखत एमरा। जानिज उर धरि अति प्रेम ॥९८॥
दुख नाशक पालो जिनधर्म। बैठि जिनालय विच जो पर्म ॥
धर्म प्रभाव प्रगट है लोय। जाते तुम पति आगम होय ॥९९॥
निज कुल क्रम आयो जो धर्म। कटिये क्लेश शांति करि शर्म ॥
इमि अश्वास्य वधू जन सवै। आयो सभा वीच नृप तवै ॥१००॥
मिलि बरांग बनता तहां सवै। धारयौ शांत भाव उर तवै ॥
ससुर वचन सुनि जिन गृह गईं। धर्म कर्म विचरत तैं भई ॥१॥
तब महीपति जु सभो मझार। बैठो आय सु गुण भंडार ॥

मंत्रिनि सहित बिचार कराय । सुत सुखेन तहां लियो बुलाय॥२॥
दियो युवराज तासु को तबै । जाछ मनोरथ पूरे सवै ॥
सो तब राज करतु निःशंक । जीते अरि जन गम बहु वंक ॥३॥

अडिल ॥

जो निज गुन करि भूतल को उज्जिल करै ॥
अरि गज मद बल दलन भाव उर में धरै ॥
सो मृगपति विक्रमधर कुल चन्द्रमा ॥
नाम वरांग कुमार तेज करि रवि समा ॥४॥
ताहि तुरंग हरि ले गयो बन विच डारियो ॥
पुनि सुखेन तिस पद में नृप बैठारियो ॥
लोक विषै सुख दुःख करम फल भोगवै ॥
उदै होय जिमि आय जगत वासी सवै ॥५॥

॥ गीता छंद ॥

विज्ञान बिनय विनीत गुण सु धैर्य गुण धारी वरं ॥
पुनि त्याग ग्रहन सु वस्तु के विच वर बिचार सुमति धरं ॥
सौभाग्य मँदिर जनन सुख कर नाम जासु वरांग है ॥
थिर भयो तिस बिनु धर्मसेन सु छिन न सुख साता लहै ॥६॥

इति श्रीवरांग चरित्रे भट्टारक श्री वर्धमान विरचिते तस्य भाषायों राजलोक तथा अंतः पुर को बिलाप वर्णनें नाम सप्तम सर्ग समाप्त भया ॥७॥

अथ आठवां सर्ग

॥ चौपाई ॥

अथ मथुरापुर को नृप एक। इन्द्रसेन नामा अविवेक ॥
नाम उपेन्द्रसेन सुत तासु। शत्रु भयंकर दल बल जासु॥१॥
वैरी गज मद दलन मृगेश। है दोऊ सुत तात नरेश ॥
बल वीरज वारण समरत्थ। उन सम कोई ना जग तत्थ ॥
है अभिमानी दोइ नर वीर। राजा सुत युत साहस धीर ॥
एक समै तिन भेजो दूत। ललित पुरी को जिन मृग पूत॥६॥
राजा देवसेन के पास। मनवाँछित पूरण करि आस ॥
ता नृपकें इक करि वर जोर। मद कपोल अलि करत किशोर॥१०॥
सिर बुलंद अति उत्तम गात। मुख बिच स्वेत लसत जिस दांत॥
तिस हस्ती के जांचन काज। दे दल दूत पठायो राज॥११॥
दूत ललितपुरकों चलि गयो। जाय राजसों इम बीनयो॥
दे दल सो भाँषत जो भयो। हे महाराज वचन यों कयो॥१२॥
है मथुरापुर को भूपाल। नाम उपेन्द्रसेन जो गुनाल ॥
ता सुत इन्द्रसेनि है नाम। तिनि मोकों जु पठयो तुम ठाम॥१३॥
पत्री दे निज सारन काज। ताहि खोलि बांचो महाराज ॥
इमि सुनि वचन तासु को भूप। पत्री वांची नृप गुण कूप॥१४॥
ताको अभिप्राय लखि सबै। माँगतु हमरो गज वह अबै ॥
एसो जानि पत्र भुव डारि। तासों बच नृप कहत पुकारि॥१५॥
मथुरा को अधीसरे दूत। कैसो नृप कैसो यह पूत ॥
कहा कहतु सो कहु तू बात। इमि सुनि दूत तबै बतलात॥१६॥
मथुरा नगर विषै है बली। इन्द्रसेनि नृप करता रेली ॥
सुत उपेन्द्र युत सेनि सु नाम। ते दोऊ महाबली गुन धाम॥१७॥

बहु राजा जिस पद सिर धरें। मान सहित दोऊ राज्यसो करें ॥
अप्रतिमल्ल नाम गजराज। माँगतु तुम पर सो सिरताज ॥१८॥
देहो कि नाहि कहो तुम सोय। हमरो भ्रमन जु दीजे खोय ॥
देवसेनि नृप सुनि तसु वानि। कहत भयो ताकी तजि कानि॥१९
तो हम नृप वल पौरुष नाँइ। जानतु है सो हमें बताइ ॥
निज वल करि गर्वित तो नाथ। अहि मुख सो डारतु निज हाथ॥२०॥
निज अकाज मृति प्रापति हेत। रहित विवेक लगो कोइ प्रेत ॥
कै पित्त ज्वर को भ्रम भाय। कै ग्रह पीड़ति है तिस काय॥ २१॥
के उन्माद रोग वस भयो। जाते विकल रूप परिनयो ॥
मागतु हम हस्ती नृप तोर। हठ करि कहा भयो तिस जोर॥ २२॥
सो हम कूं तू देहि वताय। नातरु अपने घर फिर जाय ॥
हम सों स्पर्द्धा करतो भूप। परि है महा अजस के कूप ॥२३॥
मान हानि पुनि हांसी पाय। राजनु विच पुनि नीच कहाय ॥
वहुत वात कहिवे करि कहा। वेगि जाय उठि करि सठ महा ॥२४॥
सो धारे जीवन की आस। जाहि तुरत निज पति के पास ॥
जाय कहो निज सव वृतांत। नातरु तुम्हरो आयो अंत॥२५॥
इम सुनि दूत उठो तत्काल। पहुंच्यो सो निज पुर दर हाल ॥
भय करि कंपित जाकी देह। तहांतें चलि सो गयो नृप गेह॥ २६॥
कहतु भयो तव वचन प्रकाश। हे नृप सुनि मेरी अरदास ॥
वह गर्वित तुम माने न आनि। तोरि दई तुमरी सव कानि॥२७॥
कहां मथुरा को हे इन्द्र सेनि। जे बातें तेरी सव फेनि ॥
इमि सुनि वचन तहां तें उठि धाय। तब मथुरापुर पहुंच्यो आय॥२८॥
मन माने सोई तुम करो। कै तिस आज्ञा सिर पर धरो ॥
सुनि के दूत वचन इन्द्र सेनि। भाषतु रोष रक्त कर नेन॥२९॥

नहिं देखो बल पौरुष मोर। ना उन सुनौं अनुभवो जोर ॥
निज कौठा बैठो गरजाहि। मृगपति सम हुइ बचन कहाइ॥ ३०॥
जवरन विच मम सन्मुख होय। तब इक छिन ठहरे नहिं सोय॥
देश कोष धन धान्य विसाल। दै मिलि है मोहि तब ततकाल॥ ३१॥
अथवा भाजि आयगो दूरि। राखि प्रान निज जीवन मूरि ॥
मैं जीते राजा बहु वली। भुज वल करि जे सम हरि हली॥ ३२॥
महा पराक्रम वंत अपार। ये अरिजन गण के चयकार ॥
ते किंकर सम सेवा करैं। जे हम आज्ञा सिर पर धरैं॥ ३३॥
निर पर शक्ति न गनते कुधी। जिन की हरी विधाता वुधी॥
ताते मोहि तास को जतन। करिये मान सिखर तें पतन॥ ३४॥
वचन कहें कहा कारज सरे। सूर वीर तुम उद्यम करे ॥
इह कहि पुर घोषणा दिवाय। इन्द्रसैन प्रस्थान कराय ॥ ३५॥
उपेन्द्रसेनादिक सुत साथ। चले जासु के आयुध हाथ ॥
सकुन निवारन करते ताहि। तिन उलंघि नृप आगे जाय॥ ३६॥
करि प्रयान नृप वाहिर गयो। नगर निकट वन डेरा दियो॥
रथ गयंद हय प्यारे वली। चार प्रकार सेना तिस चली॥ ३७॥
अंग वंग कश्मीर कलिंग। केरल आदि नृपति चतुरंग ॥
सेना सहित सबै नृपति चले। मथुरापुर अधीस संग भले॥ ३८॥
इन्द्रसेनि नृप सहित नरेश। सेना सागर मध्य प्रवेश ॥
करि सो देव सेनि पर चढ्यो। गर्वधारि उर है मन वढ्यो॥ ३९॥
करि प्रस्थान अखंडित कुधी। जाको नाहि मरन निज सुधी ॥
निज परदेश लंघ्य जिमि भीम। पहुंचो देवसैन की सीम॥ ४०॥
जाय पंथ जन लूटियो तबै। सैन्य लोग दुष्टनि करि सबै ॥
गुड़ घृत तैल आदि वर वस्त। लुट्यो धन धान्यदि समस्त॥ ४१॥

गायरु भैंस वेढ़ि ले चले । करि विध्वंस ते तहां ते चले ॥
तब सब प्रजा चलित पुर मोहि । ले निज वस्तु नगर में जोहि॥४२॥
दे सब सेनि आवत तिनि देख । शत्रु सेनि आयो जु विसेखि॥
महल उपरि चढ़ि नजरि पसार । देखतु बाहिर को निरधारि॥४३॥
बाहिर निकसि देख निज नेन । आवे चली शत्रु की सेन ॥
पलटि प्रवेश कियो पुर मांहि । पुर अंतर घिर गये भय नाहि॥४४॥
दुर्ग खातिका वेष्टित नगर । जिस तिउनी बेढ़ी चहुं वगर ॥
है अलंघ्य शत्रुनि करि सोय । दूर तजि कहुं परवेश न होय॥४५॥
तृण काष्टादिक संग्रह जहां । धान्य नीर भरियो पुर महा ॥
सिला यंत्र तिस पुर के माँहि । तिन की संख्या है कछु नाहि॥४६॥
देवसेनि तिस पुर के बीच । बैठे गोपुर पट दे खींच ॥
मथुरापुर को नृप तिस घेरि । पर्‍यो नगर बाहर चहुं फेरि॥४७॥
दुर्गम गढ़ अति ही दुरभेद्य । लोह फामरिन करिनु अछेद्य ॥
रोकि चहूँ दिशि से मथुरेस । करन न पावत कोई परवेस॥४८॥
देवसेनि निज मंत्रि बुलाय । पूछतु तिन सों सहज सुभाय ॥
वैरी महाबली आईयो । ताको कहा चाहिये कियो ॥४९॥
घेरि लियो जो हमरो नगर । रोकि लियो पुर को चहु डगर॥
जोहि उठाय दीजिये केम । जासों होय कुसल अरु चेम॥५०॥
चारों मंत्री करि सुविचार । स्वामि काज में चतुर उदार ॥
कहत भये नृप सों इम बात । सुनो भूप हम वच विख्यात॥५१॥
पहिलें जो मागतु तो नाग । सो अवसर तो गयो बड़ भाग ॥
अब यह देश कोश लियो चाहि । तुमरो सब जा में शक नांहि॥५२॥
राज देश तें देय निकार । जह मन में प्रभु लेहु बिचारि ॥
भेद दंड को अवसर जहे । वर्ततु है मन्त्री इम कहे ॥५३॥

मंत्र भेद करि जीत्यो ताहि। अस उपाय कछु है अब नाहिं॥
तिस समीप वर्ता नृप जेह। मंत्र भेद करि वस करि लेह ॥५४॥
तिस पीछें जीते वह सही। इस विधि राखि जु निज मही॥
है कोशलपुर को नृप वीर। ताके संग अति साहस धीर ॥५५॥
वीरसेन है ताको नाम। इन्द्रसेन ते अति बल धाम॥
ताहि देय धन वस कर लेय। पीछें ते निज काज करेय ॥५६॥
तजि परपंच करे जो सोय। तो हमरो सब कारज होय॥
जो इन्द्रसेनि को वस कर लेय। पुनि हम सों अरि भाव धरेय॥५७॥
तो कह कीजे ताको यतन। तो हम होय राज्य तें पतन॥
पर सहाय चिंतन भल नाहिं। कीजे जह विचार मन माहिं॥५८॥
तातें निज भुज बल करि सही। अरि को पहुंचामें जम मही॥
रण बिच मरण बिना रण मरन। होवे निहचे जंह जिय धरन॥५९॥
यह विचारि कीजे नृप युद्ध। वैरी तो है नहिं अविरुद्ध॥
या ही देस विषे हैं सूर। लोक महा साहस धन पूर ॥६०॥
ते तुम करैं सहाय अपार। समर भूमि विच रिपु क्षय कार॥
तुम पुर बीच सूर जन भूरि। आय सहाय करो दुख दूर॥६१॥
पुरजन सामंत मंत्री लोक। सब जन सूर वीर को थोक॥
हे तुमरे चिंता मत करो। धर्म धारि मन धीरज धरो॥६२॥
पुनि कश्चिन्द्रट तुम पुर माहिं। सेठि सवन को नाथ कहाहि॥
ता वहु भील मारि वस करै। दस हजार युग ऊपर खरै॥६३॥
हैं अद्वितीय सहाय नरेस। अरु तुमरे वहु है अब लेस॥
जो हम वचन युक्त जिय जानि। तो मन में संदेह न आनि॥६४॥
युद्ध करन को उद्यम करो। रिपु समस्त सम्मुख ह्वै लरो॥
नृपपद यह शरीर धन आयु। थिर नहीं रहे वृथा भरमायु॥६५॥

एक लोक में यश थिर रहे । ताही को उद्यम नर गहे ॥
सुनि मंत्रिनि के वचन रसाल । अंगीकार कियो भूपाल ॥६६॥
तिन सन्मान दान बहु कीयो । वस्त्राभूषण तिनको दियो ॥
फरह घोषना पुर में धाय । युद्ध करन अरि संग उपाय॥६७॥
तिस समये कश्चित भट जोय । इस विधि मन में चिंतित जोय॥
ससुर नगर घेरो रिपुसेन । सो हम देखत हैं निज नेन॥६८॥
जह मेरो नामहि विख्यात । इस सहाय करिये हरषात ॥
करते जन जन को जु सहाय । सुधि लहि दूर देशते आय॥६९॥
दुख में हितु बंधु अरु यार । ते सहाय करते तिहि वार ॥
ताते इस सहाय मैं करो । गुप्त वृति करि अरि गण हरों॥७०॥
आपु ही प्रगट होय मो वंश । जीतो बैरिन कौं विध्वंस ॥
रक्षा करि नृप पुर जन लोय । देव सेन करि पूजन होय॥७१॥
तब फिर अपने देशहि जाउं । निज घर सुख साता जु लहाउ ॥
प्रजा सरुक्षन पर उपगार । धर्म कर्म यश को कर्तार ॥७२॥
यह अवसर आयो मुहि सही । निज बल प्रगट करन रन मही॥
कश्चित भट मैं पायो नाम । इम चिंतवन करतो तिस ठाम॥७३॥
मन में कुमर वरांग महान । तब तकि भेरी रव सुनि कान ॥
कोन अर्थ दिवाई घोषना । राजा करि सो कहो तुम जना॥७ ॥
इम पूंछत जन कहते भये । स्वामि भक्ति हित वांछित जये ॥
ए महाराज सुनो हम वेन । तुम हो सकल जननु सुख देन॥७५॥
देव सेन आपु ही नरराज । सजि जातो अरि जीतन काज ॥
तिस सहाय करने जन सूर । आवो सजि सजि नृपति हजूर॥ ६॥
पुरु वासी बल पौरुष धार । धर्म अर्थ कामना विचार ॥
कीर्ति पुन्य प्रापति के हेत । आवो युद्ध करन रण खेत॥७७॥

इम सुन तिनि के बचन सुसार । मठि सही करि के जु विचार ॥
नृप समीप सेठिहि भेजियो । तिनि सों बात भेद कहि दियो ॥७८॥
सेठि जाय नृप सों इम वेन । कहतु भयो सब ही सुख देन ॥
नृप हम कश्चित भट है जोय । तुमसों वचन कहतु इम सोय ॥७९॥
तुम सहाय करने को हेत । रन विच युद्ध करन चितु देत ॥
राजा कहत सेठि सों बात । सुनि तिनके हर्षित मन गात ॥८०॥
मैं भी सुने तासु गुन भूरि । जो मम हिरदे रहे भरि पूरि ॥
अब तुम सेठि बुलावहु ताहिं । तुरत जांय मति विलम कराहिं ॥८१॥
आज्ञा पाय भूप की सेठि । जाय कहतु भयो तिस ढिग बैठि ॥
हे सुत भूप बुलायो तुम्हें । करि बहु विनय कह्यो नृप हमें ॥८२॥
इस विधि सेठि तासु संग लयो । चलि करि नृपति पास सो गयो ॥
सर्व वनिक जन पुत्र अनेक । तिनि कर वेष्टित सहित विवेक ॥८३॥
जाय नृपति की सभा मंझार । पास जाय तिनि कियो जुहार ॥
नृप की आज्ञा पाय महान । उचितासन बैठो तिस थान ॥८४॥
रवि सम द्युति धारतु सरवंग । रत्नाभरणनु भूषित अंग ॥
पूरव तप फल तेज अपार । पायो है जन अचिरज सार ॥८५॥
निरषि रूप तिस भूपति तबै । मोहित होय गये जन सबै ॥
कुमर अवस्था जन मन हरन । होय सबै कों दृग सुख करन ॥८६॥
लखि विस्मय धारतु मन भूप । यह तो नर कोई गुन अति कूप ॥
वनिक पुत्र नाही यह कोय । निश्चय करि जानी जिय जोय ॥८७॥
कै सुर कै विद्याधर आहि । बनिक रूप धार्यो तन माहि ॥
क्रीड़ा करि मुहि भुलमन काज । आयो यह कोऊ गुन निधि राज ॥८८॥
के कोई कारन लहि वार । आयो है कोई राजकुमार ॥
गुप्त वृति करि मम पुर आय । बस तो सेठि गेह सुष पाय ॥८९॥

अथवा मम भानिज है एह ॥ धर्मसैनि नृप सुन गुण गेह ॥
दुष्ट तुरंगम हरियो जोह। दूर देस ल्यायो है सोय ॥९०॥
विच वैरिन के संकट पर्यो। तहां पराक्रम बहु इन कर्यो॥
इन वातनि करि पूरी परो। जाहि पूंछे निज कारज सरो॥९१॥
इमि निश्चै करि पूंछतु ताहि। ललति पुरी पति मन हरषाहि॥
भद्र तुमारे गुण मैं सुनैं। पहिलैं ही निज मन मैं गुनैं ॥९२॥
स्नेह विचारि फेरि के करें। शत्रु उपाय अभै चित धरें ॥
तुम धीरज धारी हो भद्र। करुणा धरि तुम्हरो मन अद्र॥९३॥
महा प्रीति मेरे मन भई। तुम गुन सुनि चित अति हरषई॥
तुम बस करे भील वन भूरि। वानिज जन कीने दुष दूरि॥९४॥
अब हम सिर अरि चढ़ियो आय। ताको कछु इक करो उपाय ॥
जा संग्राम विषे अरि जीति। पावो यश अरि माने भीति॥९५॥
जो यह काज करो निर वय। अर्ध राज पुत्री दो सय ॥९६॥

दोहा ॥

इमि सुनि नृप के वचन तव, कुमर वरांग विचारि ॥
कहतु भयो नृप सों तवैं, दया अंग उर धारि ॥९७॥

चौपाई ॥

राज सुता अपने गृह राखु। नहिं हमरे धन को अभिलाष ॥
निर्मल यश और पुन्य विशेष। ए कल्याण करन की रेख ॥९८॥
इन ही की हम वाँछा करैं। और न कवहूँ चित मैं धरें ॥
वैरी के संग युद्ध जु करे। जीत पाय पुनि यश विस्तरे॥९९॥
तातैं युद्ध करन के काज। चलिये यश कारन महाराज ॥
इह विधि दोउ संभाषण करें। जब लों नृप कश्चित भट धरें॥१००॥
तब लों आये सब सामंत। सजि सजि राज द्वार मय मंत ॥
सवहिनु को नृप राखतु मानु। आभरन देय पर पान॥१०१॥

अप्रति मल्ल नाम गज साजि। चढ़न हेत नृप दियो रन काज॥
कुमरहि बहु सन्मान कराय। जो कश्चित भट नाम धरोय॥२॥
जो जावतु नृप को गजराज। ता अरिनाश करन के कोज ॥
निज स्वामी जय वांछा हेत। चढ़ि गज कुमर गयो रन खेत॥३॥
मंत्री सेनाधिप सामंत। और सुभट नर महा महंत॥
ते सन्मान पाय भूपाल। नागा रूढ़ चले ततकाल॥४॥
कै यक चलें तुरग आरूढ़। कै इक रथ चढ़ि चले अगूढ़॥
क्रोधारुणित जासु युग नैंन। चले भूमि रन अरि भयदेन॥५॥
करि सन्मान सबनि को भूप। पाछेते चाल्यो गुन कूप॥
मन वांछित वाहन चढ़ि सोय। चाले दे(?) मनि भय शोजि(?) ॥६॥
तब तक जे जन वासी देस। ले ले आयुध योग्य सुभेस॥
निज २ वाहन हुइ असवार। करन सहाय चले नृप लार॥७॥
गुफनी गोला हाथ कृपान। ले ले चले सबै बलवान॥
लकुटायुध कर गहि गोपाल। चले रणांगण लूटन माल॥८॥
बखतर तन धारी बर वीर। प्यादे चले जात रन धीर॥
क्रोध धारि डर कंपित काय। निकसे भूपति अग्र सुभाय॥९॥
हींसत जात तुरग चहु वोर। धावत गज गर्जत अति जोर॥
खड्ग खेट को दंड कृपान। मुद्गर गदा धरे करवान॥१०॥
सूर वीर नर कूं त्रिमूल। कर धारे मुख मंडित धूल॥
शत्रु त्रास कारी करि खर्ग। कर उठाय कहते जन वर्ग॥११॥
कहां जायगो तू हर सेन। सबमिलि भाषत हैं इम वेन॥
भेरि मृदंग शंख कंसाल। परह ढोल बाजत मंदलाल॥१२॥
वैरिनु दल बिच क्षोभ करंत। पूरित करत सकल नभ पंथ॥
जो शोभा यहां भई अपार। सो कुछु वरनिन जाय उदार॥१३॥

इतके देव सेनि युवराज । उतने भद्र सेनि दल साजि ॥
आय खडे रनभूमि मंझार । सनमुख भये दोऊ सिरदार ॥१४॥
योधा युग्म सेनि के सजे । युद्ध करन बाजे यहां बजे ॥१५॥

॥ दोहा ॥

भयो सैन्य संघह तहां दोऊ न जय चय कार ॥
अमर इन्द्र युत सेनि दोऊ धरत न धीर लगार ॥१६॥

॥ मरहट छंद ॥

पुर वाहिर आये रन भय पाए युगम सेनि युतभूप ॥
वरांग कुमारा तिन बिच धारा राजत मय न सरूप ॥
रचियो रण काजे दोऊ दल माझे गरुड़ चक्र युग व्यूह ॥
रण सिंघे बाजे सुनि गज गाजें भिड़ते समूह ॥ १७ ॥
दंती समद दंती करत भिंदतो तुर उनु तुरग भिड़त ॥
रथ सों रथ लड़ते सुभिन सह्मरते सुर न सूर चहंत ॥
कोदंड लिये कर तीछन जिन सरधादृत नभ तल भूर ॥
कल्यांत जल दशम चोम करत जिमि तिमिगा जल अति रणसूर ॥१८॥
कोई अर्द्ध चन्द्र सर लिये धनुष कर छोड़त अरि दल मांझ ॥
तजि मोह गेह को सकल देह को जिन की हों त्रिय बांझ ॥
सोने के वाणनु तानन कानलों तीछन अति मुष भाजि ॥
अरि सन्मुख जाते करि दगराते छोड़त सुरति सहनात ॥१९॥
ते हृदय विदारत सोणित काढ़त करते घात अपार ॥
वखतर को काटत हय उद्घाटित निकसि जात तन पार । २०॥

दोहा ॥

इह विधि दोऊ सेनि विच परयो महा घमसान ॥
पीछे हटते नाहि कोऊ करते अग्र पयान ॥२१॥
अंग भंग करते कोऊ कर कर गहि कुंत कृपान ॥

वैरिन को इत उत तबै, धावत काल समान ॥
करसों करको ग्रहन करि, कोइक सूर समान ॥
मस्तक पर चढ़ि मारते, तिन थिर सूर महान ॥
तिन गज गोलक सृंखला, लोह भई कर धारि ॥
ताड़तु तन तिन सूर को, दंतनु तिनहि विदारि ॥२४॥
गज पर बैठे सूर जे, रहरे लुतन पूरि ॥
जनु पलास फूले सघन, अंजन गिरि सिर भूरि ॥२५॥
रन सोहत ते सूरमा, करत परस्पर युद्ध ॥
कानन वाणन खींच करि, कुंडल कृत अविरुद्ध ॥२६॥

छंद भुंजगर प्रयात ॥

भई मारु भारी छूटी रक्त धारा।
सु वीरानु केते वे करारा ॥
वही जाति सरिता सुभूपीठि धरता।
भिंद् खंगधारानि करि वीर मरता ॥२७॥
तिनोपाद् खंडा सु कच्छ पस मुंडा।
तिरें जानु जंघामके हस्ति सुंडा ॥
पिसा चावका काक गृद्धाविचर्तें।
पला स्वाद् लोलपटा ग्रास धर्तें ॥२८॥
सु स्वानस्थि मज्जा मुखो बीचधारे।
फिरैं वीचरणभूमि के तन विदारे ॥२९॥
नहीं प्रात जानें कु संदेह कुंत जिनके।
ते गज दंत पगधारि कर जिनके ॥
करें घात गज पृष्टि बैठे करन को।
धरें ध्यान उर में सुप्राणन हरन को ॥३०॥

कोई खांय मूर्च्छा परे भूमि माहीं।
कोई मुदगरा घात करि भाग जाहीं॥
गदा चूर्णिता मस्तका सूर केई।
तजें प्राण निज भूमि गिरे मृत्यु लेही॥३१॥
कटें सूर सिरु रुंड लड़ते विनोके।
करें घात बहु खं। है कर जिनोके॥
कटें हाथ पामो परें भूमि रणमें।
उठें फिरि गिरें नाहिं है सुद्धि तन में॥३२॥

दोहा॥

चक्रगदा मुदगर खड्ग, तोमर कुंत सुवान।
इह विधि युद्ध भयो घनो, दुहू सैन्य रण थान॥३३॥

पद्धडी छंद॥

गोफिन गुलेल हल हाथ धारि।
तहाँ लड़त कृषी बल बल सम्हारि॥
कर यष्टि मुष्टि गोपाल वाल।
मुसलादिक करि युद्धत विशाल॥३४॥
भर लोगनु भय कारी महान।
तहाँ करत युद्ध हरा प्रान॥
रथ तुरंग नागरण नरमंभार।
चूर्णी कृत मृतक परे अपार॥३५॥
दुर्ग मरण भूमि भई विशेष।
मृतकचु पर चरण धरत निदेख॥३६॥

दोहा॥

देवसेनि नृप के भटनु। भंग करी तिह काल॥
इन्द्रसेनि नृप की चमूं, भगति भय से माल॥३७॥
भंग देषि निज सेनि को, मथुराधिप महाराज॥

तनुज सहित आयौ तवै, अरि जीतनि के काज ॥३८॥

कड़खाछंद ॥

साथ ले सुतनि को क्रोध उर आनि-
को दंड कों तानि चहुं मारि कीनी ।
वांन वर्षा करी मेघ लागी झरी-
मनो बिच गगन तलवारि भीनी ॥
भिरत दोऊ वीर नहि धरत छिन धीर-
कल्यांन के भानु समतेज धारी ॥
रौद्र मूर्ती दोऊ उर निरीखौ उभो-
देव हरि सेनि युत भूप भारी ॥ ३९ ॥

॥ दोहा ॥

तब उपेन्द्र सुत सेंन सुत, नृप को जो वर वीर ।
नाहवलाहक नाम गज, चढि आयो रन धीर ॥४०॥
षट सहस्त्र गज तासु के लार चढे सामंत ॥
गज कपोल मद झरत तहां, गाजत अति भयमंत ॥४१॥
देवसेनि की सेनि के, सनमुख आवत देख ॥
विजय नाम मंत्री सुगज, चढ़ि आयो सु परेषि ॥ ४२ ॥

॥ छंद नाराज ॥

कहां तू भागि जायगो, खड़ो रहैंन क्यों अवै ।
सु मेरो अग्र भूमि के विषै, सु शस्त्र धरि सवै ॥
परस्परो कहे इसे सुन वेन क्रोध धारि के ।
मिले संग्राम भूमि में भिड़े सुरति सम्हारि के ॥ ३॥
भुजानि खेंचि वान कों सुतानि धनुष कानलों ।
समारते दोऊ नरेस सेनि सूर सोभुलो ॥
अडे संग्राम भूमि में सु हेरि हेरि शत्रु को ।

चलावते सु वीन एक मारु मारु ही करै ॥
दोऊ प्रहार बंचना करें, मत्त युद्ध भए जो ॥
बड़े सु शस्त्र धारी वीर वैरि वर्ग को हरै ॥४४॥
गजेन्द्र दंत काटते मु खड्ग धारि धावते ॥
प्रवेश केसु सैन्य वीच पोय अग्रनू धरै ॥
करें सुमारमार वार वार के पुकार सो वचाय ॥
खड्ग धारि निज प्रहार शत्रुये करें ॥
अदृष्टि दृष्टि देत कर सुवान धनु समेत है ॥
खड़े संग्राम सु नेक टारे ना टरें ॥४५॥

॥ दोहा ॥

विजय मंत्र भर प्रवल अति, करत महां संग्राम ।
देव सेनि नृप की तरफ, चाहत बल जे धाम ॥४६॥
भेदत तीक्षन कुंत करि, इभ कुंभ स्थल सूर ।
सिंहनाद करते महा, दलित रिपुनु सिर भूरि ॥४७॥
मुदगर घात गदान करि, चूर्णी कृत रथ जानि ।
डारि दिये रन भूमि बिच तिनके सूर महान ॥ ४८ ॥
त्रासित किये तुरंग तहां हाथी भूमि गिराय ।
विजय सचिव के वीर वर मोरु करत भय भाय ॥४६॥
सेनि भूमि मय देख के उपेन्द्रसेनि कुमार ।
नाम वलाहक तासु गज चढ़ि आयो तिहिंवार ॥५०॥
विजय नाम मंत्री उपरि, करिं मन रोष विशेष ।
करी वाण वर्षा प्रवल मनो वेग रण देश ॥ ५१ ॥
तब तक कश्चित भट तहां आयो सजि हथियार ॥
रोष धारि मन में करी तहां वहु मार ॥ ५२ ॥

उपेन्द्रसेन तब यों कहे, सुनिरे वानिक पूत।
निज बल गर्वित होय करि, कहत बचन अवधूत ॥५३॥
मो आगे तौ जाय तू, जो चाहैं कल्यान।
क्यों निज मरन चहैं, अबै मारो क्यों तुहि वान ॥५४॥

चौपाई।

तूं करन चतुर विउपारा। क्या धारैं कर असि धारा॥
वनियनि को काम यहे है। जो तुला वांट करि लहे हैं ॥५५॥
क्षत्रिन संग नहिं रण करना। करि बनिज उदर निज भरना॥
कुलमें जो क्रम चलि आयो। ताही में तिन यश पायो ॥५६॥
विपरीति राह जे जावें। ते हांसी जग बिच पावें॥
तू हम संग युद्ध करनु को। चाहतु है सुख भरन को ॥५७॥
धनराज आस उर धरि के। जे हैं घर सरवसु हरि के॥
जगमें नहिं होय बड़ाई। क्षत्री संग ठानि लड़ाई ॥५८॥
पहिलें हम करन न योगा। तो पर हथियार अनेका॥
तातैं तुहि आप चलावौ। निज पौरुष हमें दिखावौ ॥५९॥

सोरठा।

इह विधि तसु सुनि वानि। कश्चित भट उत्तर दियो॥
तेरी कीनी कानि। निज घर आवन लाज धरि ॥६०॥
जीव जाति है एक। जोमें तोमें है सही॥
लखि उर धारि विवेक। एक टेक नहिं कीजिये ॥६१॥

छन्द।

पूरव जो पुन्य उपायो। तिस को फल उदै जु आयो॥
सुरन तन कोरज सोई। क्षत्रिन वनिज कुल कोई ॥६२॥
धनु विद्या बीच प्रवीना। द्रोनाचारज कीना॥
अर्जुन क्षत्री कुल धारी। वह ब्राह्मण कुल अवतारी ॥६३॥

जे सूरवीर रण धीरा । कुल हीन बने चर कीना ॥
रण में पाएं अरि जीति। कुल जाति बड़न बिच कीर्ति ।।६४।।
वन में गज कुंभ विदारी। जो सर्व सत्व भय कारी ॥
तिरजंच नामक कुल उपजो। सो सिंह साँच के सपनो ॥६५॥
नृप मंत्रीं पद गहि बानिय। जिन स्वामि काज उर आनिय॥
निज विक्रम करतैं सार्धे। नृप काज अरिन को बांधे॥६६॥
जिन्हँ भूदान दें राजनि। सन्तोषति कर गुन भाजिन॥
फुनि चार दान जे करते। गुरु भक्तिहि हिये में धरते ॥६७॥
तिनकों तू अब क्यों निंदत। वैरिनु जेसिरु छिंदत ॥
कुल जाति गोत्र कह कामें। तू करन चहेतु संग्रामें ॥६८॥
क्यों नहि यों सन्मुख आवे। निज पौरुष क्यों न दिखावे॥
घर बस्तु चाह जोतेरे। तो आवत क्यों नहिं नेरे ॥६९॥
गज लेके निज घर जावो। पूरन मन कामु करावो॥७०॥

॥ दोहा ॥

इन्द्रसेनि सुत निज, क्रोध धारि मन माहिं।
गजवलाहकारूढ़ जो, सन्मुख ताके जाहि॥७ ॥

अडिल्ल छन्द।

क्रोधोद्ध सूची मुख बान चलाव तो।
मर्म विदारक सायक बहु बरषावतो ॥
इन्द्रसैन सुन धनुष लियो कर में तबे।
मारत रिपुगज अङ्ग विदारतु है जबै॥७ ॥
नव कश्चिन्न नोम सुकढ़न बान को।
अर्द्ध चंद्र निज सर करि मनु सनमान को॥
अपने बाननि करि तसु गज तन भेदियो।
नाम बलाहक है जिस सों व्याकुल भयो ॥७२॥

उद्धत दोऊ वीर परस्पर लड़त है ।
निज२अङ्ग बचाय घात बहु करत है ॥
शक्ति त्रिसूल नराच चक्र कुंतासिले ।
सायक घायक कनय भिंदि पालादिले ॥७३॥
करते युद्ध महान दोऊ दल पति तहां ।
मारु करत बहु भाय परस्पर मद गहा॥
इन्द्र सेनि सुत शक्ति चलाई जो सही ।
सो वा में कर ग्रहि कश्चित भट ने तहीं॥७४॥
डारि दई भू माहि दक्षि कर धारि कें ।
सक्तो तिस मारतु तिस बलहि संम्हारिकें॥
सो भी छेदनु चक्र धारु भुज दंड कों ।
दोन क्यनि कश्चित भट को बल बंड को॥७५॥
द्वितीय चक्र कर लेय चलावत भयो तवै ।
कश्चित भट के ऊपर पहुंचो सो जवै ॥
तिन देखो निज सन्मुख आवत चक्र को।
लेय गदा करि काटि दिया कर चक्र को॥७६॥
डारिदियो भय माहि कर्ने करि पुनि तथा ।
छेदो दक्षिण हस्त कटक भूषित यथा ॥
चमर छत्र तिन तोरि दिये छिन एकमें ।
कश्चितभट बलवंत क्रोध करि तिस समें॥७७॥
बांये कर करि युद्ध करतुसों सामु हैं ।
कश्चितभट समुयेन्द्र सैंन जसु नाम है ॥
हीन वीर्य भयो राज पुत्र को जसु के ।
बानिक पति निजगज सन्मुख आनि के ॥७८॥

ताके गजसों निजगज भिड़िवायो सही ।
राज पुत्र को गज मर्दित कीनों तही ॥
फुनि दंती दंतुनि करि दंत उषारियो ।
करसों कर करि करी भूमि तल डारियो ॥७९॥
कश्चित भट तहाँ शक्ती तीक्षन छोड़ियो ।
जाय हृदैं रिपु भेद्यो तिन मुख मोरियो ॥
परयो धरनि पर मूर्छा खाय तवे तहाँ ।
सुधि न रही तन की बेहाल भयो महा ॥८०॥
शक्ति घात तन भेदित ताको पाय के ।
खड्ग लेय काटो सिर क्रोधाय के ॥
रतनन कुण्डल मंडित सिर सोहतु तवै ।
परयो भूमि विच अंबुज शोभा धर जवै ॥८१॥
ज्यो रविनभ विचरत काल मन मोहतो ।
विगत मेघ रिपु कश्चित भट त्यों सोहतो ॥८२॥

दोहा ।

तव कश्चिंद्भट वीर रस, मोहित भयो अतिगात ।
परयो देखि रिपु भूमि, मद गज भात्र धरात ॥८३॥
मद मातो मातंग जिमि, करत फिरतु विध्वंश ।
त्यों वरांग कुमार नृप, उपज्यो क्षत्रिय वन्श ॥८४॥
सिंह नाद करि गजन को, विमद करत तिहि ठौर ।
टोरत रथ सिरु चक्र को, फोरत करतो भोर ॥८५॥
वाजिनु बाजी गय रथा, चमतकार दिखलाय ।
भय उपजावतु है तथा, कश्चितभट बहु भाय ॥८६॥
नरपदाति कर मुष्टि के, घात मारि भय डारि ।

दूर देशथित बान करि, मारतु अति भय कारि ॥८७॥
जन संहारी रूप तहां, जनतु दिखावतु सोय ।
महाकाल सम जो भयो, रण बिन रन त्रिष भाय ॥८८॥
किंकल्याँत प्रचंड रवि, किंप्रलयानल पुंज ।
किमद्विज स्थंभ वर, रिपुचय करि भुवि पुंज ॥८९॥
बाजी हृत श्रुत श्रूय ते, नृप सुभसैंन स्पैव ।
भागि नैय मम चागतः, सुभ प्रेरित बाद्येव ॥९०॥
वृथा कथित वर वानि यह, लोके श्रुति जन मान्य ।
पुत्र बनिक वर सूर यह, रिपु सुत विना न चान्य॥९१॥
या वर्ष्चितय तीस नर देवसेनि मुख माप ।
इन्द्रसेनि तावनमृतक, पुत्रदृष्टुम बाप ॥९२॥
वसुधा मिह निर्दव से, नाम देयेत्र विधाय ।
तदरिम हं पश्चात्तथा, हन्मितु निज बैराय ॥९३॥
गजारूढ़ि रोषारुणित, लोचन युग हर सेन ।
ये जो देसे नाभि मुख, मव दन्नित सुखबैन ॥९४॥

अथ युद्ध वर्णनं अडिल्ल ।

देवसेनि के सन्मुख आय खड़ौ तबै ।
इन्द्रसेनि नृप वर्जी धनुष कर धरि तबै ॥
आकर्षन करि काननु लों सर छोड़ते ।
दोऊ वीर रनधीर नहीं मुख मोड़ते ॥९५॥
मिलें परस्पर भिड़त महा संग्राम में ।
सूर भयंकर दोऊ निज २ धाम में ॥
तब भाखतु सुर सेनि अमर पति सेनि सों ।
युद्ध करन तोहि, युक्त नाहि सुखवेन सों ॥९६॥

मरो पुत्र तोइ हां भूमि रण आनि कै ।
भागि जाउ हम आगे तें भय मानि कै ॥
रे वरांक मम पौरुष जानतु नाहि है ।
मो संग युद्ध करे तें प्राण गमाय है ॥९७॥
देव सेनि इम भाषि चक्र कर लेय कें ।
छेदो सिरु को मुकटु तासु को वेष कें ॥
ईंद्रसेनि तब कश्चित शक्ति चलाई तासु कों।
दंत धरा धर धारि शत्रु के नासु कों ॥९८॥
अर्ध चन्द्र कर वांन ललित पद साधि कें।
काटि दई सो सक्ती गुरु आराधि के ॥
ता पीछें पुनिदेवसेनि शक्ती लई ।
छोड़ो अरिपे जाय छत्र छेदति भई ॥९९॥
गज वाहन कर डारि दियो भूपर जबैं ।
देवसेनि तसु धुजा दंत तोड्यो तबैं ॥
कनक शास्त्र वर रतन जटित कर धारि कें ।
करतुग गन उद्योत सदा जु निवारि के॥१००॥
देवसेन फुनिचक्र धारि करि करिन कों ।
सुंड खंड कर डारि दियो भुव अरिन कों॥
उतरि नागतें नवे सोन हरि पूर्वजो ।
गलपति गज आरूढ भयो आयुध सजो ॥१॥
देव सेनि हूँ साजि करतु संग्राम को ।
ताहो नय करि वीर तजतु जिस जाम को॥
दोऊ सन्मुख होय वीर वर योध तें ।
नाना आयुध भिन्न गात्र नहिं वोधते ॥२॥

छत्री कुल बल गर्वित दोऊ वीर हैं।
करत भये चिर काल युद्ध रण धीर हैं॥
करते दोऊ संग्राम देषि निज नेन सों।
कश्चित भटरण माहि भिरत जहां सेन सों॥३॥
कायर जन भय कारण हार जु सूरिमा।
षड़ षड़गयऊ पर कर में परि हरि छमो॥
देवसेन निज स्वामि पच्छ के करन कों।
आयो रन भुवि अग्र वेरि बल हरन को॥४॥

छंद कड़पा॥

धारि के धनुष कर षेंचि सर कान लो।
छार तो वैरिगज तन विदारे॥
शक्ति त्रिशूल नाराच मुदगर गदा।
धारि कश्चित सुभट तहां हंकारे॥
करत तहां घात रिपु दंति दंतीप कों।
स्वामि निज भक्ति उर में सम्हारैं॥
भयो चिरकाल तहां युद्ध दोऊनि सो।
वैरि संग लरत नहिं टरें टारे॥
देव युत सेनि पुनि वीर कश्चित।
सुभट करत रण भूमि बिच मारु भारी॥
समर भूमि में खड़े शत्रु आगें अडे।
करत संग्राम निज भय निवारी॥
तवै कंश्चित सुभट षडग करि।
काटियो मत्त मातंग मुख वैर केरो॥
देव सेनि हूँ तवै सांग के घात करि।

भेदिगज उदर तन भयो निवेरो ॥६॥

दोहा ।

उतरि तवैं नागते, इन्द्र सेनि मथुरेस ।
तुरत तुरग असवार, भागतभयो विशेष ॥ ७ ॥
भय कंपित सर्वांग तसु, पुत्रमरन निज जान ।
दलित सकल दल देखि दृग, भंगमानि उर आन ॥८॥
तब योधा सब तासु के, भाग्यो निज लखि नेन।
मान भंग को पाय , आय सरन सुर सेनि ॥९॥
गयो भाग इन्द्र सेनि जब, देव सैन हरषाय ॥
बाजे बहु बजवाय करि, अभय घोषना धाय॥१०॥

चोपाई ॥

तब कश्चित भट आदिक सूर । विजयादिक मंत्री जे भूरि॥
उतरे निज २ वाहन त्याग । देव सेनि सेती अनुराग ॥११॥
करत प्रणाम सुमन वरषंत । पुर वासी जन सकल महंत ॥
आपुस में मिलितेभरि वांह । सुख सर वर उर बढ़ो अथाह॥१२॥
कुशल खेम पूछत सब जना । आपुस में पूछत सब जना ॥
कश्चित भट नृप पायन पर्यो ।तब राजा सुख स्नेहहिभर्यो॥१३॥
कुशल खेम पूछत भयो तासु । आलिंगतु भयोगाढ़ सुजासु॥
तब नृप देव सेनि इम कहे । कश्चित भट सेती गुण गहे ।।१४॥
तुम हो महो सूर बर वीर । तुम बांधव ममगुन गंभीर ॥
तुम ही मेरो राणोराज । तुम हो सब जनमें सिरताज ॥ १५॥
पुर जन को तुम रक्षा करी । तुम अब जीव दया चित धरी॥
इम संभाषन करि नृप सोय । कश्चित भट आदि नृप जोय॥१६
तिनि सब से मिलि करि अस्वास।मन में धरि नृप अधिक हुलास॥

पुरी प्रवेश कियो जिह काल। आई प्रजा सबै दरहाल॥ १७॥
नमस्कार करिते भये सबै। पुर बाजा छाइयो जबै॥
कलश धरें आगे सिर नारि। आइ खड़ी भई पुरु के द्वार॥१८॥
आनंद भयो नगर में जोय। ताको बरनि सकें न कोय॥
आप सभाबिच बैठयो राय। कश्चित भट संग ले हरषाय॥१९॥
सिंघासन पर इम सोभंत। जिमि शशि भानु युगुल द्युतिवंत॥
राजादिक जन ले आइयों। जिन जिन इन सहाय रण कियो॥२०॥
तिन तिन को करि करि सन्मान। विदा किये दे दे फल पान॥
वस्त्रा भूषन बहु विधि देय। अरु तिन को जुहार नृप लेय॥२१॥

दोहा।

देव सेनि नृप सोहतो, बैठयो सभा मंझार।
कश्चित भट को साथ ले, जैसे हरिहल धार॥२२॥

कवित्त।

एक करीवर कारन भूभुज, माथुर इन्द्रमनि दुख पायो।
चउ विधि सेन मतंग अश्व रथ पायक आदिक नाश करायो॥
आकुलता जु भई तन में, अति पुत्र मरन जब यादहि आयो।
सुकृत छीन भया जब ही, तब कोने नहीं लघु नाम धरायो॥२३॥

गीता छंद।

निज राज्य नाश त्रियोग, सुजननि अघ उदै जब आइयो।
पुनि ग्रेह तजि बन वास, पायो तुरग हरि लेजाइयो॥
तहाँ भ्रमण करि देसाँतरे, बिच जोति अरिगण सुभ उदै।
सुख भोगतो सो रत्नपुर ग्रह लहि संग त्रिय मन धरि मुदै॥२४॥
कश्चित सुभट तहाँ नाम पायो, सुजस छायो लोक में।
जो नृपति वारांगथित, जुवराज पद जिस को भयो॥

शुभ अशुभ फल भोगे प्रथम, त्रय में सु पुनि नृप पद्लयो ।
वांछित सुसिद्धि भई सवैं, श्लाघ्या न सुजन के थोक में ॥२५॥

दोहा ।

पुन्य उदै होवे जबे, तब नर पावत राज ।
पाप उदे विघटैं सवै, निज घर सुःख समाज ॥२२६॥

इति श्री वर्धमान भट्टारक विरचिते इन्द्रसेनि को पराजय वर्णन नाम अष्टम सर्ग समाप्त भया ॥८॥

अथ नवां सर्ग

चोपाई ॥

इक दिन देवसेनि नर नाथ । कश्चित भट सो कहतु सुभाय ॥
निज पुत्री तसु व्याहन काज । मनमें इच्छा करि गुन आज ॥ १ ॥
निजगृह सभा बीच थित होय । तसु गुण लखि मन हर्षित होय ॥
सूर वीर तुम गुण गंभीर । द्युति धारी देखियत शरीर ॥ २ ॥
को कुल कोन ग्राम सुख वास । कौन मातपितु सुत तुम जासु ॥
हम इच्छा वर्तत सुखदेन । पुत्र कहो सो हमसों वैन ॥ ३ ॥
ता नृप के सुनि वेन मनोरथ । तासु मनो गन जानि सुयोग्य ॥
कहतु भयो भूपति से तवै । ए नृप बचन सुनीजे अवै ॥ ४ ॥
सागर वृद्धि सेठ सुत जानि । सुनी न पूरव नर मुख वानि ॥
जो पूछत हम को तुम तात । कंकन हाथ मुकट पुनि तास ॥ ५ ॥
उपज्यो सुकुल प्रगट जस लोय । पुनि देशाँतर प्रापति होय ॥
जिस गृह जाय लहे सुख वास । सोई कुल प्रगटे पुनि तास ॥ ६ ॥
यह तो प्रगट बात जग जानि । जामें फेरि रंच नहिं आनि ॥
जो जदुबंश जनमु हरिलयो । ग्वाल ग्रेह पालनु जिस भयो ॥ ७ ॥
भूमि त्रिखंड पती पुनि होय । संज्ञा ग्वाल गई नहिं कोय ॥
जनक पुत्र हरि सुत दोऊ जान । भामंडल प्रद्युम्न महान ॥ ८ ॥
नाम प्रगट जिनको जग सही । हरियो बैरी करि गुण मही ॥
बाल पने ही ते जिन वृद्धि । पाई विद्या धर गृह सिद्धि ॥ ९ ॥
विद्या धर वर संग्या पाय । जग में प्रगट भये बहु भाय ॥
तिहि विधि तुम जानो नृप मोहि । सो अपने मन देखो टोहि ॥ १० ॥
सो मैं सेठि जाति कुल केर । नाम ही करि प्रगट्यो यह वेर ॥

सेठि प्रीति यह थिरि हुइ रहो। वचन सभा में तुम सो कहो॥ ११॥
इम कहि मौन गह्यो युवराज। कश्चित भट जो गुननि जिहाज॥
कहत भये मंत्री तिहि समैं। वचन भूप सों मस्तक नमैं॥१२॥
हे प्रभु महा पुरुष है कोय। हम यह निश्चय जानी लोय॥
सो यह अपनी निंदा करत। पर के गुण निज हिय में धरत॥१३॥
पर को निंदा करें न भूप। आपु प्रशंसा नहिं गुण कूप॥
संतनु की यह रीति मनोग। यह सब पूरब पुन्निहि योग॥१४॥

(अत्र उदाहरणं)

अडिल्ल छन्द ।

उत्तम ते नर होंय सुगुण करि प्रगट ते।
तात कीर्ति करि मध्यम पुरुष कहावते॥
ससुर कीर्ति कर जाहर जे जग में सही।
अधम पुरुष ते कहावत हैं बिच भूमि ही॥१५॥
ये नर वंशाचार प्रगट न रहें सदा।
अर पुनि ये स्वाचार प्रगट जग सर्वदा॥
यातें या नर को कुल उत्तम जानिये।
याकी उत्तम क्रिया प्रगट पहिचानिये॥१६॥
देह क्रांति वर अन्न भुक्ति नर की कहै।
ऊंचे कुल को वर आचार प्रगटै जहै॥
पुनि भाषा नर देश बाल जाहर करै।
ज्यों जग में जिन बैन मोक्ष मग विस्तरै॥१७॥
नहिं या सम वल वीरज धर नर और है।
नहिं या विन कोई तेज पुंज को ठौर है॥
निज उदार गुन करि जो वंश प्रगट करै।

जइ कश्चित भट उपज्यौ निश्चै नृप घरै॥१८॥
तातैं जाके गुण प्रभु देखि दृगनु सही।
युद्ध विषै जो पराक्रम इस सम है नहीं॥
देखो कोई भूप अवर नर तुम हमी।
तातैं जामें अवर गुननि की क्या कमी॥१९॥
अब याको वर वंश विचार न कीजिये।
निज मुख भाषो वचन सो इसे दीजिये॥
अर्द्धराज पुनि सुता सुनंदा नाम है।
दीजै जाय विवाह जही सुख धाम है॥२०॥

चौपाई।

यह प्रतिज्ञा को धरतु नरेश। तिह पालतु नहिं कर अंदेश॥
ज्यों दशरथ वच निज मुख भाष। भरतहि राज राम वनवास॥२१॥
सुनि मंत्रिनि के वचन रसाल। अंगीकार किये तत्काल॥
चितु चिंतन करि धरि उर प्रीति। विधि विवाह की करि शुभ रीति॥२२
शुभदिन लगुन महूरत साधि। देव शास्त्र गुरु को आराधि॥
कन्यादान दियो तसु भूप। जो कश्चित भट मयन स्वरूप॥२३॥
अर्धराज पुनि देश रु कोष। दे तिसकों नृप भयो निर्दोष॥
कामदेव सम रूप धरंत। जानि जमाई नृप विहसंत॥२४।
बन्धु लोक को करि सन्मान। वस्त्राभूषण देय वहु मान॥
सागर वृद्धि सेठि के तेह। पठयो सुजन सहित धरि नेह॥२५॥
पुत्र वधू युत आवत देषि। सेठानी तव मनहिं विसेष॥
सुवरन थारी अर्थ बनाय। करति आरती अति हर्षाय॥२६॥
पुनि सब बंधु विदा तिन किये। सेठ सेठानी मन हरषिये॥
सेठि तबै इक महल मनोग। दोनों पुत्र वधू वर जोग॥२७॥

जाया सहित भोग भोगये । विविध भांति हरषित हुइ गये ।
आपुस में अति प्रीति धरंत । ते दंपति दोऊ सुख भोगंत ॥२॥
विविध भांति वांछित वर वस्तु । तिन करि भोगत भोग समस्त ।
एक समैं दूजी नृप सुता । मनोरमा नामा गुन युता ॥२९॥
महल उपरि खिड़की विच जोय । निरखति इत उत हर्षित होय ।
कश्चिद्भट नृप सभा मंझार । आवत लखिजिमि काम कुमार । ३०॥
ताके गुण अरु रूप विसाल । अरू सौभाग्य तासु को बाल ॥
मन में सुमिरि सुमिरि अधिकाय । सजल नेत्र युग भये सुधाय ॥३१॥
कामानल संतापित गात । असन पान कछु नांहि सुहात ॥
मानुष्य जन्म पाय करि कहा । अरु नव यौवन तन मो गहा । ३२॥
इन करि काज सरयो मुहि कमना । जो कश्चित भट संग नहि रमन ।
सोई त्रिया कृतारथ जानि । रची विधाता निश्चे आनि ॥३३॥
ताके सकल फले मन काज । जाको गवै यह गुन भोज ॥
नहिं मंदिर विच थिरता गहै । छिन बाहर छिन भीतर रहै ॥३४॥
निशा मध्य पौढ़े जब शयन । रोवे मीड़े दोऊ कर ननन ॥
नहिं छिन धीरज धारे चित्त । बार बार सुमिरे तसु मित्त ॥३५॥
कबहुँ कि लता भवन बनि जाय । ताको रूप लिखे ठहराय ॥
सिला पट्ट बिच मयन सरूप । जो कश्चित भट नाम अनूप ॥३६॥
निरखि २ तह रुदन कराय । अधोमुखी दृग अश्रु बहाय ॥
पीछे एक सखी तिस आय । कर युग नयन मूंद विहँसाय ॥३७॥
ता कर सपरस ते सो जान । फुनि तसु बच सुनि निश्चै आनि ॥
जानि सखी लज्जित कछु भई । विरह लहरि अति हिय में गई ॥३८
हंसि करि सखी चित्र मेटियो । मनोरमा मनमें दुख कियो ॥
देखि अवस्था ताकी सखी । तासों यह विधि बानी अखी ॥३९॥

तेरे चित को चोरन हार। को नर काम देव अवतार ॥
किम एकाकिनि वन ग्रह त्याग। बैठी लता भुवन अनुरागि॥४०॥
लिखत चित्र पट यह किमि सार। सो तू मोसों कहु विवहार॥
निरभय हुय करि इस बनमाहि। बैठी क्यों तुहि जिय डरु नाहि॥
सुनि करि सखी बचन सो बाल। कहति भई तासो तिंह काल॥
जब मैं ग्रह सुधि देख्यो नहीं। तब मैं बन विच आई सही॥४२॥
क्रीड़ा करन आय इस थान। सहज लिखो नर रूप सुजान॥
सुनि तसु बचन सखी इम कहै। जो नर तो मन में सरदहै॥४३॥
ताहि छिपावतु क्यों इह वेर। सांची कहु मन को तजि फेर॥
तब सुनि सखी बचन सुकुमार। गदगद बचन कहति हियहारि४४
अँसुअन भरि आये तिस नेन। विरह वियोग हेत तब ऐन॥
जब तें मैं देखो शुभ रूप। कश्चित भट तन मैन सरूप॥४५॥
तब तें विरह अग्नि तन दहे। छिन इकहू थिरता नहि गहे॥
सो मोसों कहु कहा मैं करूं। तासों तो कहते नहिं डरूं॥४६॥
क्रीड़ा ग्रेह न प्रिय जन संग। मो मन रमतो नहि सरवंग॥
पुष्प सेज बन बाग मंझार। तन चन्दन लेपन कर सार॥४७॥
तिस वियोग संतापित देह। नहिं रति धारतु छिन छिन तेह॥
असन पान मोहि कछु न सुहाय। निस विच मो मन रहयो समाय४८
तातें तू सखि निश्चय जान। आयो निकट मरन को थान॥
तिस विनु धरन धीर समरत्थ। छिन इक नहिं तू जानहुँ तत्थ्य।४९
सुनि तसु वचन सखी हित कारि। कहति भई तसु बचन उचारि॥
राज कुमरि चिंता मति करै। वेगहि तेरो कारज सरै॥५०॥
कश्चित भट समीप मैं जाय। तोर मनोरथ कहों समुझाय॥
वसी करन मन मोहन मंत्र। पुरुषनि के जानति बहु तंत्र॥५१॥

यंत्र प्रयोग बहु विधि ओषधी । अरु विद्या मोमें बहु सधी ॥
तिनिकरि तुहि तिस वस करिदेंहु।तब फिर कहु निज काज करेहु।
राज कुमरि करि थिरु चित तबै । बहु विधि आस्वासन करि जबै॥
दूती गई कश्चित भट पास। कहति भई तसु वचन प्रकास ॥५३॥
विहँसि इकांत देशथित होय । मनोरमा को वांछित जोय ॥
धन्य पुरुष तुम हो जग मांहि।तुम सम पुन्य वंत कोई नाहिं।५४॥
जातैं यो दुर्लभ जग वस्तु । सो तुम्हैं प्रापति होय समस्त ॥
पुरुष अनेक चाह जिस करै । सो सब तुम्हरे पायनु तरै॥५५॥
यौवन वय मन हरन सरूप । नारिन वसी करन गुण कूप ॥
इत्यादिक गुण धारत अङ्ग । सो कहा वरनो हो सरवंग ॥५६॥
राजा करते पूजा पाय । व्याहि सुता तिस भोग कराय ॥
ता नृप सुता दूसरी और । तिस सम सरस रूप नहिं और॥५७॥
सो तुम संगम वांछा करै । तुमसों प्रीति अधिक चित धरै ॥
नव यौवन ताको तन लसै । निशि दिन चित तुममें तिस वसै।५८
ता संग कीजे भोग विलास । चलि एकान्त देश वनवास ॥
इम सुनि काननु पै कर धारि । कहत भयो तासों जु पुकारि।५९
सो वानिक पति शील विधान । यह वच छोड़ि कहो तुम आनि॥
इह भव पर भव में दुखदाय । यह कीजै नहिं धरि नर काय॥६०॥
निज रमनी रमने व्रत धरयो । ताही को मन निश्चै करो ॥
सो कैसें करि छाड्यों जाय । यह मौसों तू कह समझाय॥६१॥
ता व्रत को जो भंग कराउँ । ताके पाप नरक दुख पाउँ ॥
सुनि तसु वचन कहत भई सोय । दूती निज स्वारथ वस होय६२
तु ारो मन मुनि मोहित कियो । ताते तुम वच इम भाषियो ॥
तुमरी बुद्धि ठगी गई राय । तासों तुमरी कहा वसाय ॥६३॥

कहां नरक कहां है सुरलोक । किन देष्यो तहां सुख दुख शोक ॥
जो मानुष सुख दुर्लभ पाय । भोगे नहीं सो मूरख राय ॥६४॥
ते उत्तिम नर धारी देह । तेई बुद्धिमान गुण गेह ॥
ये नव कामिन के संग भोग। भोगत नर तन धारि निरोग॥६५॥
तिनि ही को सुरपुर सुख केर । प्रापति है यहांई इह वेर ॥
और कहां यातें सुर वास । गोदहि डारि उदर की आस॥६६॥
नव नारिनि संग भोग न करे । ते नर जन्म वृथा जग धरे ॥
दुख शोकादिक सहत शरीर इहां ही नरक वास तिनि बीर॥६७॥
तातें तुम परभो सुख आस । छोड़ि करो त्रिय भोग विलास॥
तुम वानिक पति योवन धारि । थिर न रहोगे इस संसार ॥६८॥
जो वृत भंग पाप तें डरो । वृत ते सुर सुख आसहि भरो ॥
सुर पुर में सुख देवांगना । संग भोग कर उपजे घना ॥६९॥
तुम्हरो वृथा चिंतवन येह । यह जानों निश्चै संदेह ॥
सो तुम यह भव भोगो सुख। मनोरमा को मेटो दुःख ॥७०॥
सुर नारी तें अधिक सरूप । याको दृग मन हरन अनूप ॥
तातें याकों अंगीकार । करिये कुमर यहे सुख सार ॥७१॥
फेरि कहत वानिक पति बैन । ता दूती सों चित हित देन ।
तू जु कहति वच अघको मूल ।जिन आज्ञा तें है प्रतिकूल ॥७२॥
नां हों सुनों नहीं सरदहों । याते नरक वास दुख लहों ॥
सो दुख मोपे सह्यो न जाय।तू क्यों मेरो चितु भरमाय॥७३॥
ऐसो बचन कहे मति फेरि । मनमें निज विचारि करि हेरि ॥
छिपि करि नहि तिस सेवन करों। परनारो संगम परि हरों॥७४॥
जग में मो कलंक सिर चढ़े । अरु मो दुःख मूल अघ बढ़े ॥

ऐसो कुकरम कीजे केम। विन व्याही तियको मुहि नेम ॥७५॥
जो नृप मोकों दे परनाय । विधि विवाह करि मन हरषाय॥
तो ताके संग भोगों भोग । नहिं जाको कोई और अनोग ॥७६॥
नहिं जामें कोई और विचोर । तू क्यों भाषति वारंवार ॥
सेठि पुत्र दृढ़ चितमें जानि। कारज सिद्धि जानि निज हांनि॥७७॥
भई निराश क्लेश चित धारि । उत्तर दे न सकी तिहि वार ॥
सुनति सो वैन पलटि सो धाय। भूप सुता के निकटहि जाय॥७८॥
कहति भई तासों इस बैन । करि हों तो वांछित सुख देन ॥
थोरे दिननु बीच मन लाय। तू निहचों करि जानु सुभाय॥७९॥
मन कोसे दसवें परि हरो । स्वस्थ चित्त निज कारज करो॥
स्नान क्रिया करिये निज अंग। वस्त्राभरण पहिर सरवंग ॥८१॥
असन पान मुख वीरा खाय । निज तनु को संस्कार कराय ।
मनोरमा सुनि दूती वानि । विफल मनोरथ निज पहिचान॥८२॥
यह उपचार बचन इम कहे । ते पुनि निज मन में सरदहे॥
आकुलता तजि थिर घर होइ। बैठी मनोरमा जिय जोय ॥८३॥

कवित्त ।

जो जग दुर्लभ वल्लभ वस्तु समस्त सुनो फुनि सुल्लभ होई ।
दूरि जु भूरि करूंरनु के करसों निकरै फुनि आवति जोई ॥
पुन्य प्रताप धरें जग में नर ताकों सहाय करें सब कोई ।
कीरति तसु जग में प्रगटे फुनि गाइये वेद पुराननु सोई ॥८३॥
सो शुभ गोत्र सुगात्र प्रताप विभूतिहिं पाय लहे सुख भारी ॥
ताहीं सो राग करें जग जीव धरे मुनि को पद सो सुखकारी॥

सो सुर वंद्य अनंदित होकर फेरि लहैं शिव सुन्दर नारी ॥
जेनर पूरब पुन्य कियो वर सो सब सज्जन को मन हारी॥८५॥

दोहा ॥

पुन्य पुरुष जग यश लहे, कहे कमल दृग सोय ॥
सुख अनंत सो भोगवै, कर्म मेल सब धोय ॥८६॥

इति श्री वरांग चरित्रे श्री महा भट्टारक कवि रचिते तस्य भाषायां, वरांग मनोरमा विवाह वर्णन नाम नवम् सर्ग समाप्त भया ॥ ९ ॥

अथ दसवां सर्ग

दोहा ॥

हरयो तुरंग वरांग जो, कथन कह्यो सब सोय ॥
अब बरनो तिस तात को जो दुख पाछे होय ॥१॥

चौपाई ॥

धर्म सेन सुत नाम वरांग। हरयो जानि हरषित सर्वांग ॥
ताके वैरी नृप जे और। चढ़ि आये तिस ऊपर जोर॥२॥
नृप पद बैठो वह हरषेन। जानि निवल तिनिको कछु भै न ॥
तिनि सो युद्ध भयो अधिकाय। सो मोपै वरनो नहि जाय॥३॥
भागो लषि नृप सुत रन भूमि। पलट गये निज पुर को घूमि ॥
धर्मसेनि बहु दुख तब कियो। तब वरांग के गुन सुमरियो॥४॥
पोरुष युत रिपु जीतन हार। धीर बीर सुन्दर तन धार ॥
बुद्धि विशाल वाल मो सही। बा हरि ले गयो वन मही॥५॥
ता बिन वैरी किय अपमान। कर्म लिखी मेरे को आन ॥
यह विचारि चित्त नृप वीर। युद्ध करन उठियो रनधीर॥६॥
पर सेनो की शक्ति नरेश। गिनत न मन में करतु अंदेश ॥
पुर तें बाहिर दूरहि जाय। डेरा करैं सुमन उमगाय॥७॥
मंत्री जन सब ही तब आय। कहत भये नृप सों समुझाय ॥
हे महाराज समैं नहीं एह। रिपु संग युद्ध करन गुनगेह॥८॥
बिन विचार कारज जो करै। मान भंग व्है दुख बहु भरै ॥
हम बल निर्वल रिपु है जोर। चढ़यो जानि वह मूछि मरोर॥९॥
जीतन समरथ नहिं इह वार। तातें कीजै और विचार ॥
तुमरे हितू नृपति जे और। तिन बुलाय लीजे इकठोर॥१०॥

तिनि सहाय लहि कीजे युद्ध । जीतें बैरी मिटैं विरुद्ध ॥
तातें यही ललितपुर माँहि । या सम हित कर अरु कोऊ नाहि॥११॥
राजा देवसेन जिस नाम । पर उपगारी अति बल धाम ॥
ताके पास दूत भेजिये । यह कारज तुरतहि कीजिये॥१२॥
मंत्री के वच नृप उर धारि । दूत बुलाय लियो सुविचारि ॥
दे दल ताहि विदा नृप कियो । ब्योरो सब तासों कह दियो ॥१३॥
दूत ललितपुर तुरतहि जाय । पहुंचो शीघ्रहि गमन कराय ॥
देवसेनि नृप सभा मंझार । पत्री देत सु कियो जुहार॥१४॥
बांचि लेख अवनीश्वरसोय । देवसेनि चिंता युत होय ॥
मंत्री तथा सुतापति तबै । लिये बुलाय निकट निज सबै॥१५॥
कहतु भयो तिनसे नृप बैंन । जो कश्चित भट चिति दुख देन ॥
मम वंधू जन नृप सिर ताज । वसत कांतपुर में महाराज॥१६॥
धर्मसेन नामा बर बीर । ताको बड़ो परी है भीर ॥
नाम वरांग तासु सुत जोय । दुष्ट तुरंगम हरियो सोय॥१७॥
जो युवराज प्रगट यश जासु । ताकी बार मिली नहिं तासु ॥
तब हरिखेन जेष्ट सुत जोय । बैठारयो तिस पद पै सोय॥१८॥
सुत विरहा रधि मगन नरेश । जानि शत्रु आये तिस देश ॥
इन विच जोति सुखेनहि तेह । देश नाश कीनों सुनि लेह॥१९॥
तब नृप धर्मसेनि गुन खानि । जीतो सुत सुखेन को जानि ॥
सकल विनाश देशतिन कर्यो नृप यह जानि क्रोधमन धर्यो॥२०॥
रिपु जीतन मन करयो बिचारि । हमें बुलावतु है इह वार ॥
सो तुम राज भार सिर धरो । लोक प्रजा प्रतिपालन करो ॥२१॥
है निशंक वैठो निज ग्रेह । हमैं गमन की आज्ञा देहु ॥
हम जामें वंधू हित काज । धर्मसेनि की राखन लाज॥२२॥

यह कहि पत्र दियो कर तासु।चलने उद्यम कियो नृप आसु।।
बांचतु लेख झरयो दृग नीर।रुक्यो कंठ भयो विकल शरीर।।२३।।
मात पिता बांधव दुख जानि। दीरघ स्वांस लेत गुन खानि।।
हृदय बीच दुख धरि अधिकाय।रुक्यो कंठ तहां रह्यो ठहराय।।२४।।
धोयो बदन तासु दृग नीर। कंप मान अति विकल शरीर।।
देखि दशा नृप तिस इस भाय।गद्गद् भाषतु हिय उमगाय।२५।।
भो सुत मैं प्रथमहि जानियो।करि उन मान ज्ञान आनियो।।
धर्म सेनि सुत हो तुम सही। यह जिय में पहिले सर दही।।२६।।
सो तुम गुप्त वृत्ति कर रहे। मो काजें रण संकट सहे।।
अपनो नाम प्रगट नहिं कियो।रिपु को जीत जगत जसु लयो२७।।
तुम सम बंधू जन नहिं और। धारो मो प्राननु की ठौर।।
गुन देवी भगिनी सो धर्म।धर्म सेनि भगिनीपति पर्म।।२८।।
नित सुत नाम वरांग कुमार। सो कश्चित भट भये अवार।।
अब मोहि मिलो वेगि उठि धाय।याते मेरो हियो सिराय।।२९।।
भुज पसारि उठि मिलियो तवै। भागि नेय कश्चित भट जवै।।
देव सेनि नृप हिय उमगाय। रुदन कियो बहु मोह वसाय।।३०।।
वोलो तासों मधुरी वानि। सजल नयन आनंद उर आनि।।
आजु पवित्र गोत्र मुझ भयो।कुल बल सकल सुफल परिनयो।।३१
पुत्र तुमारो प्रगटो नाम। धर्म सेन सुत गुन अभिराम।।
तुम आगमन पांय भयो धन्य।अब मुहि चिंता रही न अन्य।३२।।
कहतु बचन वरांग सों राय। सुनि सो दूत हिये हरषाय।।
वोलत बचन कुमर सों सोय।प्रनमि चरण दृग जल मुख धोय।३३।।
हिय उमगों ताको तिहि काल। निरखि वरांग अंग दर हाल।।
हे प्रभु कांत नगर ते जवै। निकसे तुम हय हरियो तवै।।३४।।

राजा यों कीनों विललाप। सो मुझ कहि परे जु आप॥
मंत्री पुर जन-किय बहु शोक। और विदेशी जन के थोक॥३५॥
अंतः पुर मातादिक सवै। जो दुख कियो सु को मुख चवै॥
राजा तुम अवलोकन काज। भेजे नर पदाति लजि वाजि॥३६॥
ते सब ढूंढ़ि फिरे सब ठोर। शक्ति पाय कीनी चहुँदोर॥
कहुँ यन खबरि मिली तुम जबै। फेरि आये जु विमुख हुय सबै३७॥
इस पुर आमन हूँ की नहीं। खबर मिली राजा को सही॥
इस विधि कहि सो तिससों वैन। चुपु हुइ रह्यो करि नीचे नेन॥३८॥
तब फिर देव सेनि नृप कहै। ताके गुण हिय में सर दहे॥
ए सुत सुता मोर जे आहिं। सत मित तिनको तुम पर नाहिं॥३९॥
योवन धरन रूप गुण धाम। कांति युक्त जिन तन अभिराम॥
सुनि वरांग नृप के वच सार। कहतु भयो नृप सो अविकार॥४०॥
हे धरणी पति तुम इम वेन। मति भाखों अनन्द दुख देन॥
अब विवाह विधि करि मुहि सवैं। परी परो सुमन वचनो अवैं४१॥
पुनि नरपति भाषतु वचतासु। हिरदे विच गुन धरि जासु॥
मनोरमा नामी जो सुता। तुम रंगराची बहु गुण युता॥४२॥
ताहि कुमर परनी जे सही। और कछू अब भाखों नहीं॥
सुनि नृप के ते बचन वरांग। नृप को प्रेम जानि सरवांग॥४३॥
अर दूती के बचन विचारि। ताको प्रीति जानि अधिकार॥
मोनालंवन करि तब कुमर। थिर हूवो कुज विच ज्यों भ्रमर॥४४॥
देखि दसा नृप ताकी तवै। जाने भाव मनोगत सबै॥
शुभ दिन लगुन महूरत सोधि। पंच मरम पद कों आराधि॥४५॥
सोभा नगर माहिं करवाय। विविध भांति वादित्र बजाय॥
मंगल गान पूर्व शुभ रीति। कन्या दीनी उरधरि प्रीति॥४६॥

मनोरमा संग तासु विवाह भयो । गयो विरहानल दाह ॥
शांत चित भई भई नृप की धीय। । हिरदे सरस प्रेम उमगिया४७
मन वांछित वर पाय कुमारि । प्रफुलित मुख मन सुख अब धारि॥
कुमर वरांग कुमारि । योग विधाता धरो सम्हारि ॥४८॥
भोगत भोग सदा विधि योग । यह विधना विधि कियो नियोग॥
जाय। सहित वरांग नरेश । देवसेन नृप युत निज देश ॥४६॥
धर्म सेन निज तातहि पास । चलने की मन धारी आस ॥
सागर वृद्धि खबर यह जानि । दृग दे प्रीति जासु विधि कानि।५०॥
तब सो निकट कुमर के आय । कहतु भयो इम वच उमगाय॥
पुत्र साथ तुम भी चले । एक अरज सुन लीजे भले ॥५१॥
जहां तुम रहो तहां नहि रहें । तुमरे संग गोन फुनि गहें ॥
तुम वियोग सहने कों वीर । नहिं समरथ हो नज तन धीर।५२॥
तुम दरशन बिनु छिन इक तात । कंपित होत हमारो गात ।
तात मात हमरे तुम सही । हमरी रक्षा किय वन मही।५३॥
हमरे जीवन हमरे प्रान । दयावान गुन शील . निधान ।
सुनि वच कुमर कहतु भयो तासु । सागर वृद्धि नाम है जासु।५४।
तुमरे सकल मनोरथ जेह । करि हो सुफल विमल गुनगेह ॥
सुनि करि सेठि सुमन विहंसाय।आनन्द बाढ़ो हिये न समाय ५५
देव सेन सेना ले लार । गजरथ तुरग चारि परकार ।
पुनि पदाति युत पार न वोर । ।५६॥
संग जामात्र बंधुजन जासु । पुत्री युग मंत्री पुनि तासु ॥
चल्यो तुरत नृप अति हरषाय। जाकी महिमा वरनी न जाय॥५७॥
कांचनि मनि मुक्ताफल जाल । रत्न पदारथ और प्रवाल ॥
इन करि पूरित करि जामात्र।एक सहस भट दिये तन मात्र।५८।

सागर वृद्धि सेठि सम सोय। देव सेनि नृप के संग सोय॥
चलो वरांग सुकरि प्रस्थान। ललित पुरी प्रति अति बलवान५९॥
नवल युगल त्रिय सिवकारूढ़। चली संग जिन नाम अगूढ़॥
रत्ना भूषण भूषित अंग। दश दिशि द्योतित है सर्वांग॥६०॥
सेना आगे कुमर वरांग। सागर वृद्धि सेठि जिस संग॥
मारग बिच चलतो जिहि समें। बंदी जन आगे ह्वै नमें॥ ६१॥
अस्तुति पढ़ते विविध प्रकार। दान देत नृप तिनहि अपार॥
उदति भानु सम कांति विशाल। तन में धारतु भयो तिहिकाल६२
तुरग तीक्ष्ण खुर खंडित भूमि। दंती दंतनु जित तित घूमि॥
रज उड़ि छाय रही आकाश। चाहति मानो किय सुरवास॥६३॥
देस सीम निज नदी उलंघि। गिर गह्वर आदिक सब नंघि॥
थोरे दिननि बीच पहुंचियो। मानों पितु सनेह खेंचियो ६४॥
देव सेनि वरांग कुमार। सागर वृद्धि सेठि जिस लार॥
श्री धर्म सेनि देस के पास। पहुंचे सकल सुथल कियो वास।६५॥
कुमर वरांग सेठि युत सोय। सुख पूर्वक तिष्टत सब लोय॥
तिस पीछे सागर वृधि नाम। सेठि पठायो नृप के धाम॥६६॥
देव सेनि नृप करि सुविचार। कहि दीनों तिस सों व्यवहार॥
तुम नन्दन जे सार्थ अवैं। हम आये सुख कारन सबैं॥६७॥
जिस हय हरि ले गयो बन माहि। नाम वरांग कुमरि है जाहि॥
सुनि करि बचन तासु को सेठि। हिरदे जासु पंच परमेठि॥६८॥
तुरत ही जाय नृपति के पास। करि प्रनाम सो गुन की रासि॥
कहतु भयो नृप सों तिहिवार। सर्व यथारथ विधि व्योहार६९॥
तब नृप धर्म सेनि उर माहिं। करत विचार सुचित अवगाहि॥
शत्रु पराजय जानि नरेस। आयो देव सेनि मो देस॥७०॥

पश्च करन मेरी यह बोर । वह प्रीतम हितकार ॥
इम बिचारि चित कहते भूप । सुनो सेठि तुम हो गुण कूप॥७१॥
कुशल क्षेम ललितेश्वर आहि । प्रजा क्षेम प्रति पाल कराहि॥
यह विधि कुशल क्षेम व्यवहार । पूंछि फेरि कहतो वचसार७२॥
कितनों बल बल है तिस संग । हरष सहित भाँखो नरवंग॥
विकसत मुख अरविंद नरेस। पुनि पूछतु तजि सकल अंदेश॥७३॥
कौन कौन नर हैं तिहिलार । केतिक गज केतिक असवार ॥
रथ पायक कितने तिस संग। अवर भूप कितने दृढ़ अंग॥७४॥
यह विधि पूंछत सो नर पाल । धर्मसेनि अति दीन दयाल॥
सुनि तब सेठि कहतु मुखवानि । जा सुनि होय सर्व दुख हानि ॥७५॥
हे प्रभु एक वरांग नरेश । आयो भ्रमण फिरतु बहु देश ॥
जाके बल को पार न बार । सब वर वीर नमै सिरदार ॥७६॥
जा करि इन्द्रसेनि नृप हन्यो । जो मथुरेश नाम जिस भन्यो॥
ता सुत उपेन्द्र सेनि पर चन्ड । ताहू मारि कियो सत खंड ॥७७॥
रण विच विजय पाय नृप सोय । जाको सुयश प्रगट जग होय॥
अब तुम कह्यो सेठि बिहसूर । काको सुत कोहै गुन पूर॥७८॥
तब पुनि कहै सेठि प्रभु सुनो । पुत्र आपुको है बहु गुनो ॥
हय हरियो देशांतर गयो । पुन्य उदै सो आवतु भयो॥७९॥
धर्म सेनिनृप सुनि तसु वेन । हरिषत गात भयो हिय चेन ॥
करि सन्मान सेठि को राज। रत्नाभरन वस्त्र दे साज॥८०॥
अधिक विनो कीनो नरपाल । पुनि तिस संग चलो दर हाल॥
निज सुत श्यालक मिलने काज । साथ लेय निज सकल समाज८१
तात आगमन सुनि करि सोय। कुमर वरांग सु हरषित होय॥
स्वसुर साथ सन्मुख चालियों । जानि तात निकटे आनियों॥८ ॥

दूरिहि तें तब तजि गजि वाजि। पाय पियोदे ह्वै महाराज ॥
सचिव सुजन संग ले तिस देस। गाढ़ मिलन करि युगम नरेस८२॥
धर्म सेनि सुरसेनि जुदोय। एक थान थित हरषित होय ॥
तहां तब सो युवराज वरांग। आयो हरषित ह्वै सर्वाङ्ग ॥८३॥
पिता चरन युग नमन करात। आनन्द उमग्यो हिय न समात॥
नयन युगल ढोरत नृप नीर। भुज पसार सुत सों मिलि धीर८४॥
अति सुख पायो नृप मन माहि। सो कछु मोपै वरनो न जाहिं ॥
धर्म सेनि दूजो सुर सेनि। दोऊ परस्पर भाखत बैन ॥८५॥
सुत वियोग दुख दूर कराय। देव सेनि नृप सों वहु भाय ॥
वार्तालाप करत युवरांज। नयन कमल विकसित गुण भाज८६॥
अश्व हरन आदिक जु प्रसंग। सर्व पिता सों कह्यो वरांग ॥
यह मथुरेस पराभव भयो। सोऊ सब तातहि कहिं दयो॥८७॥
देव सेनि फुनि सागर वृद्धि। सुत वरांग युत वहु विधि रिद्धि॥
इन सब सों निज बचन प्रकाश। अति सुष पायो नृप गुण राशि८८
करि अवलोकनि तिन गुन भूरि। निज उर दुःख कियो तिन दूर ॥
देव सेनि नृप वीर वरांग। आये सुनि दल बल वहुसंग ॥८९॥
जो रिपु चढ़ि आयो थो सोय। भागो निज दल ले बल खोय ॥
वैरी भागो सुनि तत्काल। धर्म सेनि नृप भयो खुश हाल॥९०॥
दूत वचन तें मन हरषाय। दान दियो ताकों वहु भाय ॥
पलटि पयानो पुर को कियो। तुरत निशानै धोंसा दियो॥९१॥
सुत वरांग युत सो नर नाथ। देव सेनि नृप को ले साथ ॥
आय प्रवेश कियो नृप द्वार। घंटा तोरन है जह सार ॥९२॥
कनक कलश तोरन जु वितान। पुष्प माल लटकें वहु मान ॥
सुत समेत वहु रिद्धि उपेत। पुर शोभा देखन द्दग देत ॥९३॥

राज मार्ग चाल्यो नृपराय । वाजिन शब्द सुनत अधिकाय ॥
जाय सभा निज बैठयो भूप । धर्मसेनि मनि ह्वै सुख रूप ९४॥
पुत्र आगमन कारन पाय । आनन्द बाढ़्यो हिय न समाय।
उचित संभाषन करि तिहिकाल। लोक विदा करके भूपाल॥९५॥
धर्मसेन सुत सों इम वेन । भाषतु भयो हिये सुख देन ॥
ए सुत जाहु मात के पास । तुम मिलवे की मन धरि आस ॥९६॥
अब तक धारति है निज प्रान। तुम वियोग दुख दुखित निदान ॥
तात वचन सुनि तुरतें जाय । माता के चरणन शिर नाय॥९७॥
पकरि पांव सो रहो ठहराय । तब माता सिर तासु उठाय ॥
निज हिरदे सों लियो लगाय । बार २ सिर चूमति माय॥९८॥
स्नेह सलिल उमग्यो हिय माहि।नयन युगल ता करि भरि आहि॥
गद् गद् वानी बोलति सोय । हृदय लगाय लियो चिर रोय॥९९॥
आस्वासन करि के सुत तबै । संतोषित कीनी फुनि जबै ॥
तिह समये नारी दोऊ आय । देव सेन पुत्री हरषाय॥१००॥
चरण कमल सासू के नई । स्तुति करि निज थानक गई ॥
गुन देवी सो नृप की नारि । पुत्र वधू युत लखि मुद धारि॥१॥
नव योवन धारतु निज अंग । तिस तन सोहत सदा अभंग॥
पुन्य प्रताप शत्रु जीतियो। निज भुज बल करि सब वस कियो॥२॥
अनुपमादि देवी सुधि पाय । यह रानी पहिली तिस आय ॥
करि करि आभूषण अंग अंग । अनुपम वस्त्र पहिर रंग रंग॥३॥
कनक कांति तन धरन विशेस । सिरु सोहत जिन केसावेस॥
आय प्राणपति निकट सुभाय।प्रनमी चरण कमल सिर नाय॥४॥
सो वरांग दृग लखि निज नारि। छेम कुशल पूंछत सुख कार॥
और बंधुजन सब परिवार । आस्वासन करि परम उदार॥५॥

सब साखी जन करि युवराज। पिता दियो भोगत गुण भाज॥६॥

कवित छन्द गीता ॥

सुर असुर नर तिरजंच कृत उपसर्ग बिन नाशे सबै ।
फुनि रमा राम-राज्य पद युत मिलत पुन्य उदे सबै ॥
कीरति धवल शशि खीर सम जग में सु प्रगटे तासु की ।
नृप कुमर नाम वरांग की जिमि जानि रिपु किय नाश की॥७॥
तब कांतपुर में हुए महोत्सव धर्म सेनि नृपति घरें ।
तब देव सेनि हूँ के महल बिच गान मंगल त्रिय करें ॥
जब हुओ वरांग को आगमन निज अशुभ कर्म सो भोगि के ।
विस्मय करत विधि के चरित जग जानि सुख दुख भोगि के ॥८॥

दोहा ॥

पुन्य के उदै जग जननु के, सिद्धि होंय सब काज ।
पाप उदै बिनसे सकल, भाखी श्री जिनराज ॥ ९ ॥

इति श्री वरांग चरित्रे श्री वर्धमान भट्टारक विरचिते तस्यां भाषायां,
वरांग को पिता को गृह विषै आगमनं नाम दसम सर्ग समाप्त भया ॥१०॥

अथ ग्यारहवाँ सर्ग

पद्धड़ी छन्द ॥

तब भोगि कर्म फल अन्तराय। देशांतर जाय वरांग राय ॥
फिर आयो गृहवर विभो पाय। सुख भोगतु पुन्य उदै सुभाय ।१॥
पितु मातु पूजिकर विविध भांति। भुंजत बहुसुख विधि दिवसराति।
निज नारा सामंतादि लोग। तिन सहित सुभोगति सकल भोग।२॥

चौपाई ॥

इक दिन देव सेन मुनिराय। निज पुर चलन चहत उमगाय ॥
धर्मसेन सों भाखत एम। आदर करि हिरदे धरि प्रेम ॥३॥
देस चलनि निज मन अभिलाख। वर्तति राति दिवस दोऊ साख॥
हे महाराज हमारो चित्त। सो पूरो करिये कर वित्त ।४॥
राज्य करों सुख सों वहु काल। पुत्र पौत्र युत निज भूपाल॥
मम पुत्री दोऊ तुम सुत नारि। तिन हित चिंतन आयु विचारि।५॥
समैं समैं प्रति विसरो नाहि। और आज हम कहा कराहि ।
दिव्यांबर भूषन वहु देय। देव सेनि ज्ञाता गुन गेय ॥६॥
धर्मसेन की विदा जो करी। अधिक विनय की नीति सुधरी।
ता पीछे निज भगिनी पास। देव सेनि कहतो मुख भास ॥७॥
निज पुत्री ताके कर सौंपि। वस्त्राभूषण आगें रोपि ॥
भ्रात नेह परि पूरित हिया। गुन देवी भगिनी तसु पिया।८॥
तिन सन्मान दान सों पाय। देव सेनि पुर पहुच्यों जाय॥
तोरन रत्न पताका पांति। महल उपरि जहां वहु फहराति॥९॥
कोटी भुज जहां सेठि अनेक। सागर वृद्धि सबनु पति एक॥
धर्म सेनि युवराज समेत। तिस पहुंचाय आप निज केत॥१०॥

विविध भांति सुख भोगतु भयो। जाचक जननु दान बहु दयो॥
तब सुषेन की माता आय। मन्त्री पुत्र सहित भय खाय॥११॥
मृग सेना नाम नृप नारि। कहति भई मुख वचन उचारि॥
मैं अपराध किये तुम जोर। छमा करी जेते सब मोर॥१२॥
याते संतनि की यह रीति। औगुन तजि गुनही से प्रीति॥
ये माता कहा बोले बेन। ए मेरे मन को दुख देन॥१३॥
तूं मेरी है अति हितकार। भ्रात सुषेन प्रीति करतार॥
सुबुधि मंत्रि हित कारक मोर। कर्महीं शत्रु एक मुहिं जोर॥१४॥
यह निहचै करि जानो माय। और कछू मति मन में ल्याय॥
जामें क्या तेरो अपराध। विधना की करतूति अवाध॥१५॥
बिन कारन कहा छमा कराउ। आगें को कह कर्म बंधाउ॥
ये अपराध करैं जगमाहिं। फिर ताके जे सरने आहिं॥१६॥
तिन पर छमा करे नहिं एह। तिनके जन्म परोकिन एह॥
तुम कोइ मोते भय मति करो। मति अपने जिय में कछु डरो॥१७॥
शीतल कारी ज्यों शशि ज्योति। वर्षा अग्नि न ताते होति॥
करि हौं मन वांछित सजोय। चितमें ध्यान करो अब सोय॥१८॥
इमि कहि वचन वरांग कुमार। मो युवराज राज्य पद धार॥
भूषन वहुरि वादिक ल्याय। पूजि सुषेनादिक बहु भाय॥१९॥
सब सों हित मित बचन उचारि। विदा किये सब करि मनुहारि॥
तवैं सुखेनादिक सब लोग। चाले निज गेह सुख भोगि॥२०॥
वर वरांग के गुन सुमिरंत। निज २ मन विश्रम धारंत॥
यह धीरज यह क्षांतिरु शक्ति। अन्य ठोर पावत नहिं व्यक्ति॥२१॥
ते तीनों सुमिरत यह भाय। निज निज थानक पहुंचे जाय॥
इक दिन सिंहासन स्थित भूप। धर्म सेंनि मन आनंद रूप॥२२॥

तहां वरांग सुत दोऊ कर जोरि। सेठि सहित इम कहत वहोरि॥
तुम प्रसाद् पाई बहु रिद्धि । सर्वे मनोरथ की भई सिद्धि॥२३॥
अब इक विनती करो प्रमान । तात हमारे परम सुजान ॥
यह युवराज सुषेनहिं देउ । जेठो हम सब में है एहु ॥२४॥
पाले प्रजा परम सुख लहै । पुर जनता की आज्ञा वहे ॥
मोकों वसत पुरी विचतात । करते राज सुषेन लजात॥२५॥

दोहा ॥

यह विनती करि तात सों । कुमर वरांग नरेश ॥
दे युवराज सुषेन को । कहत भयो सुभ भेस ॥२६॥

चौपाई ॥

मेरे बैरिन जीतन काज । इच्छो वरतति है महाराज ॥
तुम आज्ञा पाइये जो अबै। तो यह काज कीजिये सबै॥२७॥
सुनि तसु बचन कहतु नृप सोय। ५ सुत वत्सल सुनिये लोय॥
एसो भद्र वचन कहा कह्यो। तुम विवेक धरजग यश लह्यो ॥२८॥
तुम सुत मो प्राननु आधार । तुम सबहुन के हो रखवार॥
हमहि छांड़ि जावों कहां पूत । कह मन में कीनों आकूत॥२९॥
सुनि करि पिता वचन युवराज। भाषतु मधुरे सुर गुण आज॥
तात तुमारो मोपर प्रेम । सबहुन तें अधिकी करि नेम॥३०॥
सो सब जानतु हिरदे माहिं । जामें कछू संदेह है नाहिं ॥
तो अपूर्व साधन काज । मो मन इच्छा उद्यम आज॥३१॥
तातें मुहि आज्ञा दीजिये । और कछू चिंता ना कीजिये ॥
अरि साधन विच उद्यमवान। जानि पुत्र निज परम सुजान॥३२॥
कहतु भयो राजा तिस वेन। हृदे तासु के अति सुख देन ॥
पूरों सकल मनोरथ तोहि । बहु विधि उपमा दीहें मोहि॥३३॥

हमरे कुल मंत्री ये चारि । सागर बुद्धि सेठ हितकारि ।।
इन पांचों को लीजे लार । इनकी सीष हिये विचधारि॥ ३४॥
करि वरांग पितु वचन प्रमान । पिता पादयुग प्रणमि सुजान।।
शुभ दिन लगुन मुहूर्त्त धराय । पुर सुकांत तैंनिकसि सुभाय। ३५।।
सेना सकल साजि चतुरंग । मंत्रिन चारों लीजे संग ।।
सागर बुद्धि सेठि लेलार । परम कांति धारक तन सार।। ३६॥
चल्यो निशान बजाय नरेश । वैरीगन जीतन तिन देश ।।
विविध भांति बाजें जहं बजें । सुनि धुनि सूर वीर तन सजे॥ ३७॥
वाजिन रव करि पूरित भई । दशों दिशा मनु घन गर्जई ।।
चाल्यो दल बल रिपु भय कारि । देषियत है नहिं पारावार ।।३८।।
दंती गर्जित अति विकराल । धावत हय हींसत तिहि काल ।।
रथ चिंकार करत बहु चले । भृत्य धनुष धर चाले भले।।३९।।
भये सगुन तसु बहु जय कार । करत प्रयान वरांग कुमार ।।
तब वरांग गज हुइ असवार । भूपति स्वेत छत्र सिरुधार ।।४०।।
सेना सागर बीच महंत । चालतु भयो तवे वैजय वंत ।।
स्वेत चमर सिर दुरंत जासु । बहु योधा सेवत पद तासु।।४१॥
अचलासन नृप गज पर सोय । मारग चल्यो जातु श्रम खोय ॥
गमन गिरिसरिता घोष स्थान । उत्तंग अग्रं भुवि कियो पयान।।४२
मंद गमन करि पहुंच्यो सोय । देशांतर सुर पुर सम जोय ।।
मणिवंत पर्वत तहां उत्तंग । देखतु ताको भूप वरांग ।।४३।।
सर सुति नदी निकटि जिस बहे । निरमल जल करि जो छवि लहे।।
देषि तासु नृप शीतल वारि । मनो नयन संतोषित कारि।।४४
एक ओर सरिता यह बहे । दूजी दिश अचला भुवि गहे ॥
मध्य थान स्थिति कीनी राय । सब सेना के डेरा दिवाय।।४५।।

तहां नृप जीर्ण नगर इक देषि। मन में चिंता करतु विसेषि॥
घोषी नृप जन सेवन काज। आये तिनु पूंछत महाराज॥४६
भो भो घोष वृद्ध इह नम्र। किस विधिं ऊजर भयो समग्र॥
तुम पूरव विधि जाननहार। सो तुम कहो सकल व्यवहार॥४७
तिन विच घोषन को सिरदार। वृद्ध पुरुष सब जानन हार॥
नृप सों भाषतु भयो इम जोय। कर युग जोरि विनय करि सोय॥४८
देव मुरारि कृष्न जिस नाम। जरासिंधु जीत्यो बल धाम॥
जिहि समये जादव नर सवे। नृत्य कियो इस थल विच तवे॥४९
निज साहस करि गर्वित होय। आनंद सहित महा भय घोष॥
तिस कारन इस पुरु को नाम। आनर्त नाम प्रगट जग ठाम।५०
ऊजर भयो काल बहुपाय। सो कछु कहा कही नहिं जाय॥
पायो मंदिर कूप तड़ाग। जीरन खंडित देखियत वाग।५१॥
अब तक इस थल में भूपाल। लक्षण जाके प्रगट विसाल॥
सुनि वरांग नृप तिन की वानि। विदा किये जो घोष दे पान॥५२
करि प्रनाम नृप को तब तेह। वृद्ध घोष गये निज निज गेह॥
शुभ मति मंत्री निकट बुलाय। सेठि आदि नृप पास बेठाय॥५३
कहतु भयो सिवसों इम बेंन। यथा जोग सब ही सुख देन॥
इस थल नगर वसावन काज। इच्छा हम मन वर्ततिआन॥५४
मंत्री सुनि नृप बचन मनोग। नगर बसावन कियो मनोग॥
तब तिनि गणक वेगि बुलवाय। शुभ दिन लगन महूरत पाय५५॥
दई नीव नृप पुर की तवौं। मंत्री आदि सेठि मिल तवौं॥
कोटि खातिका जिनग्रह भूरि। लोकनि ग्रह करि रही भरि पूरि॥५६
गोपुर तोरण युत चहु वोर। जासु लसत उन्नति अति जोर॥
मध्य प्रदेश नगर तिस थान। राज महल उन्नत जु महान॥५७

शिल्पि शास्त्र के जाननहार। तिनि करि करवायो सुखकार ॥
सुवरनि थंभनु करि सोवनों। मनि दर्पन करि भूषित घनों॥५८॥
राज महल आगे सोभतं। सभा सु मंडफ अति द्युति वंत ॥
वनागार धारा गृह जहां। धान्यालय क्रीड़ा गृह तहां॥५६॥
अंतःपुर मन हरण विशाल। स्त्री जन वास करन दर हाल ॥
राज महल के निकटहि एक। करवायो नृप धरन विवेक॥६०॥
जिन मंदिर उन्नत सुभ ठोर। राज महल ते हूँ अति जोर ॥
कलस तासु चुंबत आकाश। मनो चांहत किय सुरपुर वास॥६१॥
जिस पर धुजा फरहरे भूरि। मनो बुलावति जे जन दूरि ॥
वलयाकार तासु प्राकार। गोपुर तोरन भूखिलसार ॥६२॥
जो जिन गृह वेढ्यो चहुं फेरि। चकित होत सुर नर जिस हेरि॥
सागर वृद्धि सेठि गृह तहां। मंत्री प्रोहित गृह जे जहां॥६३॥
अर अधिकारिन के गृह वनें। राज महल के निकटहि घने॥
सेवक जन निकेत वहु वास। करते तहां नृप मंदिर पास॥६ ॥
वहु वाजार चोहट्ट जो वने। हृदावली हरम्य को गिने ॥
राज मार्ग तहां अतिहि विशाल। सरल भाव धारें सुख चाल॥६५॥
चारि वर्ण के जन जहां वसें। क्षत्री विप्र वनिक गृह लसें ॥
शूद्र जाति वहु भेद अपार। ते तहां वास करत अनिवार॥६६॥
नगर माहि चहु हैं जिन गेह। भवि जीवन बनवाये एह ॥
पुन्य पुंज सम शोभा धरन। निरखत नर नारी मन हरन॥६७॥
जिन गृह वाजे वजत अपार। भेरि मृदंग तूर सहनार ॥
पटहा शब्द होत गंभीर। जनु घन गर्जत वरषत नीर ॥६८॥
कुंड वावड़ी कूप तडाग। फूले कमल धरें अनुराग ॥
जिन को नीर क्षीर सम स्वेत। निर्मल शीतल गंध समेत॥६९॥

जिन करि लसति बसति बहपुरो।जिस त्रिय बिलखति लाजति सुरी॥
जंबू दाड़िम अर जंबीर। फनस वेलि तरू सघन गहीर॥७०॥
दाख छुहारे कमक कपित्थ। इनि के तरुवर हैं जित जित्थ॥
बीज फूर नारंग लवंग। नालि केलि तरु जाति अभंग॥७१॥
हरि चंदन मंदार कदंब। मोलसि केतुक कुंदरु अंब॥
चंपक शोक वकुल पाटली। शत पत्रक बंधूकरु भली॥७२॥
इत्यादिक वृच्छन युत मही। जाकी महिमा जाति न कही॥
सोहति बागनु विचि जिह देस। निरषि बटोही भरत अंदेस॥७३॥
इह विधि शोभित नगर अनूप। तहां वरांग थिति भयो वर भूप॥
भोग सकल वांछित सुख पोय। तिष्टतु निजगृह में हरषाय॥७४॥
आनन्द सहित मधुर आलाप। सज्जन बसत हरन दुख ताप॥
सर्वोपद्रव रहित महान। सब जन सुन्दर रूप सुजान॥७५॥
धर्म और नृप को परताप। खंडित करि न सकै करि दाप॥
जाकी शुद्ध वृत्ति युत क्रिया। शोभित सज्जन बच सुभ धिया॥७६॥
सागर तक पृथिवी पालना। करतु वैरि जन हरि मद घना॥
सो वरांग नृप इक दिन सही। निज वैरी सुधि करतो तहीं॥७७॥
जो सुखेनि पर चढ़ आईयो। तात भ्रात को बहु दुख दियो॥
मोको देशांतर गत जानि। देश कोश मम लूटो आनि॥७८॥
सो तू तुरत आय करि सवै। नाव कुलाधिप है जसु अबै॥
भूपति धर्म सेनि को अबै। कै तजि जाहु देश देउ सबै॥७९॥
कै मम सन्मुख ह्वै रण माहि। युद्ध करो मेरे संग आहि॥
और भांति नहिं छाड़ो तोहि। यह अपने मन देखो टोहि॥८०॥
यह विधि लिख पत्री दे दूत। विदा कियो इकनर अवधूत॥
जाय कुलाधिप नृप के पास। दूत पत्र कर दीनो तासु॥८१॥

लेकरि पत्र खोलि वाँचियो। जानि भाव तसु संको हियो॥
निज मंत्री नृप पास बुलाय। कहति भयो तिस सों समुझाय॥८२॥
तिनके आगें सब विरतंत। कहतु भयो नृप सुख कर अंत॥
है एकांत देष थित तवें। जो वरांग नृप चेष्टित नवें॥८३॥
वित्त पराक्रम करि वलवंत। है वरांग नृप अति वलवंत॥
सर्व भूमि पति साधि महान। निज अरि जनवस किये निदान॥८४
कृत अपराध सुमिरि मन माहि। हम सों वचनु कहतु उमगाहि॥
दल बलसाधि आयरण भूमि। हमसों युद्ध करो किमि घूमि॥८५
क्रोध धारि इम भाषतु सोय। निष्ठुर वचन अधिक जिय जोय॥
मिटे उपद्रव जह जिस भाँति। अरु पुनि होय तासु मनशांति॥८६॥
सो उपाय भाषों तुमसार। जातें सब जह मिटै विकार॥
इमि सुनि मंत्री बोले वेन। स्वामीहित वांछिक सुख देन॥८७॥
यह वरांग बलवान नरेश। कन्या धन दे वस्तु सुवेश॥
जो करि समता होय सुभाय। हितकर ताको मिलिये आय॥८८
मंत्रिनि के वचसुनि निज कांन। राजा मन में कियो प्रमान॥
कन्या सेना ले निज संग। गयो वरांग निकट मुद अंग॥८९॥
सिंघासन पर वैठ्यो सोय। ताहि निरषि अति हर्षित होय॥
नमस्कार करि भाषतु वेन। लज्जित ह्वै नीचे करि नैन॥९०॥
मैं अपराध कियो तुम भूरि। छमा धारि सो करि रुष दूरि॥
तुम करुना कर दीन दयाल। मोपर रच्छ करो भूपाल॥९१॥
बाढ़े कोप वडिनु उर मांहि। प्रणपति करत शांति ह्वै जाय॥
अग्नि फुलिंग दहतु जग जेम। जलकरि शांत होतु यह नेम॥९२
प्रगट बात लीजे पहिचान। त्यों नृप समता निज उर आनि॥
इम कहि तवें कुलाधिप राय। चित वरांग को हरयो सुभाय॥९३॥

सो भी ताको करतु प्रसन्न । जाके हिये चित नहिं अन्य ॥
तब वरांग वासों इमि कहे । अंतरंग आंनद बहु बहे ॥९४॥
भयो कृतार्थ तुमरे परसाद । मन में बहु पायो अहलाद ॥
इम सुनि वच वरांग के तबै । कन्या निज दीनी तब जबै।९५॥
भूप कुलाधिप अति हर्षाय । बहु विधि विनती करे सुभाय ॥
मनोहरा तिन में सिरमोर । ताके पीछे है सब और ॥९६॥
गज शत सहज तुरग वर अंग । एक कोटि दीनार अभंग॥
कन्या वर वरांग नृप हेत । अम्बर भूषन वसन समेत ॥९७॥
मनोहरा नामो त्रिय पाय । राज विलोचन श्रीयुत काय ॥
भूप वरांगहि जो सुख भयो । सो मोपे नहिं वरनो गयो ॥९८॥
और दिवस कुलाधिप राय । देश चलन मन इच्छक राय ॥
श्री वरांग सों कहतो वेन । हित करि मधुर श्रवन सुख देन ९९॥
जो नृप आजुहि तें हों भयो । कृत्य कृतारथ मुझ परि नयो ॥
राज मान्य भयो जा जगमाहि। तुमहि जमाय भये सक नाहि।०८
अर जो मनोहरा मम सुता । रूप सुहाग भाग्य गुण युता॥
तुमरे पाणि ग्रहनि तें धन्य । भई आजु जो सम नहिं अन्य॥१॥
पूरन भये सकल मम काज । अब आज्ञा दीजे महाराज ॥
देश चलन इच्छा निज हिये । वर्तित सो पूरी कीजिये ॥२॥
तव सनमान दान करि ताहिं । विनय सहित मृदु बचन कहाय ॥
बहु संतोषि विदा तिनि कियो। चलत देश हरष्यो तिस हियो३॥
सुमिरतु गुन वरांग के राय । तुरत तबै प्रस्थान कराय ॥
पहुंच्यो निज पत्तन नृप सोय। धुजा पताका करियुत सोय॥४॥

दोहा॥

पूरव पुन्य प्रताप करि । तेज वंत सुख लीन ॥
नृप वरांग वसुधा सकल । सागर तक बस कीन ॥५॥

निज भुज बल करि भूप सब, जीते अरि गन जोर ॥
निष्कंटक जिस राज्य हुइ, प्रगट पुन्य की दोर ॥६॥

चौपाई।

कियो उपकार परम जिय जानि। तातें परम प्रीति उर आनि ॥
सागर वृद्धि सेठि कों कही। दीवो राज सकल गुन मही॥७॥
नाम विदर्भपुरी को तवै। प्रति उपकार कियो नृप जवै ॥
धीधन नाम सेठि सुत आहि। सुकोसला दीनी नृप ताहिं॥८॥
जो जेठो सुत है तिस साहु। कीजो ताको और निवाहु ॥
समुद्र वृद्धि द्वितीय अरु और। तातें लघु सज्जन सिरमौर।९॥
देश कलिंग तासु को दियो। सो मतंग कुल करि पूरियो ॥
अनंत मति मंत्री के काज। पल्लव देश दियो महाराज॥१०॥
अजित नाम मंत्री के हेत। नाम विशाला नगरी देत ॥
देवसेनि मंत्री जो आहि। मोलव देश दियो नृप ताहिं॥११॥
और जेष्ठ जन जे निज सङ्ग। कनक दान तिन दिये वरांग॥
आनर्तनपुर को नृपराज। आपुनु करतो गुननु जिहाज। १२॥

अडिल्ल।

कीरति धैर्य प्रताप भोग उप भोग के।
प्रजा पालना करन आदि शुभ योग के॥
मंगल गीत सु नृत्य शास्त्र स्वाध्याय के।
सकल कला कौतुक करि अति सुख पाय के।।१३॥
सदा काल शुभ कथा लाय करि के सही।
धर्मामृत वर्षन करि चारित युत तही॥

सील सहित विज्ञान विवेक सुधारि के ।
राज करत वारांग नृपति भय टारि के ॥१४॥

दोहा ।

तिस आनर्तन पुर विषैं, तिष्टतु नृपति वरांग ।
पुण्य प्रगट फल पाइयो, काल गमतु सुख संग ॥१५॥

इति श्री वरांग चरित्रे श्रीमत भट्टारक वर्धमान विरचिते वरांगस्य आनर्तपुर प्रवेश वर्णन नाम एकादश सर्गः ॥११॥

अथ बारहवां सर्ग।

अडिल्ल।

सो वरांग भुव भला वर्तनपुर मही।
सकल धरातल मांहि तिलक सम जो सही॥
तिस बिच मंदिर कनक रतन मय सोहनो।
नित प्रति क्रीडतु तहां त्रियनु मन मोहनो॥१॥

चालि जोगी रासा की में।

कबहुंक निज नारिनि संग लेकें रमतु सघन बन मांही।
कबहुंक गिरि गह्वर सरिता तट रमतु त्रियनु गल मांही॥
कबहूँ अनूपम मंदिर जाके कनक सिंघासन पैठे।
तासु निरषि तन मोह मगन ह्वै तिस उर अन्तर बैठे॥२॥
तिन के चरननु दृष्टि धारि निज करि कुच जोरि सुहाती।
चरन कमल युग जोरि युगुल फुनि रतिसम शोभा धरती॥
विनय वान नम्रत सिर नरपति आगे स्थित अनुरागी।
रूप शील गुन गेह नेह युत निर्मल मति बड़ भागी॥३॥
नेन अरुन युग कमल पत्र सम पूत ललित तनु सोहै।
सुकृत क्रिया युत नित प्रति सो त्रिय नरपति को मन मोहै॥
ताहि बुलाय कहत तासों तब भूप वरांग सुबैना।
बैठु निकट मम सुनु बच मेरे इह पर भव सुख देना॥४॥
धर्म साधना करु मन बच तन यों सुर सिव दातार।
सुनि के अनुपम मन हरषाती कीनों अंगीकार॥
भूप निकट सों स्थित ह्वै साध्वी भाषति इम कर जोरें।
ए हो नाथ धरम विधि तसुफल सुनने इच्छा मोरें॥५॥

किस उपाय करि साधिवे ताकों सो विधि मोय बतैये।
इहि विधि पूंछति कहत भूप तब सुनि त्रिय हितु चित लैये॥६॥

चौपाई।

दर्शन ज्ञान चारित्र जो तीनि। कहत तपोधन धर्महि चीन॥
निश्चय फुनि व्यवहार वताय। द्विविधि भेद जिन शासन गाय॥७॥
जिन मत को जो है सरधान। दर्शन वोध वृत सु निदान॥
श्रावक धर्म भेद अब कहो। प्रथमहि ता सुनि के सर दहो॥८॥
अनुवृत पांच कहे तिस मांहि। तीन गुण वृत जहां तहां राहि॥
शिक्षा वृत चारो मिलि जेह। द्वादश अनुवृत तसु सुनि लेह॥९॥
यह श्रावक चारित्र इक देश। सर्वोद्देश मुनिन को देस॥
भेद भिन्न श्रावक वृत केर। कुछ व्यौरो भाष्यो श्रुति हेरि॥१०॥
निशि भोजन वर्जन जल पान। वस्त्र पूत करंत मतिमान॥
तक्र वहिर्गत जो नव नीत। कंद मूल भक्षत नहि क्षीत॥११॥
कांजी बड़े उंदुवर पंच। विल्वादिक फल भक्षन वंच॥
कचनारादिक कुसुम अनेक। सवै जाति तजि धारि विवेक॥१२॥
चौदसि अष्टमि पंचमि धारि। द्वितीया एकादशी सम्हारि॥
पर्व द्विगुन पुनि कहे जिनेश। उभय पक्ष के हेतु अशेष॥१३॥
तिन में वृत करिये तजि काज। नहि आरंभ करे अघ साज॥
साधु जननि दीजे नित दान। दीनन में करुना उर आन॥१४॥
सिला काष्ट मनि हेम लगाय। जिन मंदिर उतंग कराय॥
विगत दोष अष्टादश देव। तिनि प्रतिविंव थापियो एव॥१५॥
फेरि प्रतिष्ठा पाठ कराय। भक्ति भाव युत हिय हरषाय॥
धन धान्यादि खर्च करि भूरि। संघ चतुर जे वसते दूरि॥१६॥
तिन्हें बुलाय प्रभावन अंग। कीजे उत्सव विविधि प्रसंग॥

स्नान पूर्व जिन पूज कराय । श्वेत वस्त्र तन में अब धार॥१७॥
जल गंधाक्षत पुष्पहिं लाय । दीप धूप फल अर्घ कराय ॥
जो नित पूज करै धरि भाव। सोई सुरग मुक्ति को भाव ॥१८॥
मन वच क्रम करि ध्यान धरेय।तनु शुचि करि जिन स्तुति करेय ॥
गद्य पद्य मुखपाठ पढ़ेय । जीवन जन्म सुफल करि लेय॥१९॥
धर्म उपाय कहो यह सार । सप्त तत्व के जानन हार ॥
जो नर साधन करें विचार । यह कीजे निश्चय उर धारि ॥२०॥
धर्म धर्म फल भेद उपाय । यह समास करि भाष्यो गाय ॥
बड़े शास्त्र में बहु विस्तार । जानि लीजिये कर निरधार॥२१॥
सुनि अनुपमा नारि वर धर्म । भूप वदन तें जो जग पर्म ॥
कहति भई नृप सों हरषाय । रत्नत्रय भूषित करि काय ॥२२॥
तुम प्रसाद तें मैं नर नाथ । भोगे भोग विविध तुम साथ ॥
अब जिनमत रत मो मनु भयो। श्री जिन धर्म विषै बस गयो॥२३॥
तातें जो नगरी बिच राय । इक नवीन जिन गृह बनवाय ॥
तहां जिनवर प्रतिमा निर्मापि।करि उत्सव बहु विधि तहां थापि॥२४
पंचोपचार पूजा विधि करन । मो मन इच्छा भव दुख हरन ॥
वर्तत है निश्चै हिय मांहिं । सोई पूरी करिये ताहि ॥ २५ ॥
मुनि श्रावक चउ संघ बुलाइ । दान दीजिये मन वच काय ॥
दीन दुखी जन करुना धारि। देहु दान निज पर सुखकार॥२६॥
यह कहि मौन पकरि त्रिय रही। तब राजा फिर तासों कही॥
ऐ प्यारी यह काज्य मनोग्य। धर्म ध्यान साधन शुभ योग॥२७
मैं विलंब यामें नहिं करों । तुरतहि इस कारज विच परों ॥
तेरो वांछित पूरों सवैं । करिहों मैं विलंब तजि अबै ॥ २८ ॥
इम कहि नृप तासों तिहि बार। तुरत जाय नृप सभा मंझार॥

कहतु भयो मंत्रिनि बुलवाय। कारन सबै दियो समुझाय॥२६॥
जा पुर मध्य देश वरठौर। जिन मंदिर करवैये और॥
मन्त्री नृप आज्ञा सिर धारि। शिल्पि शास्त्र जे जानन हार॥३०॥
बुलवाये ततछिन ते तबै। जिन गृह निर्मापन विधि सबै॥
तिनि सों पूछि भेद व्योहार। सुचि थल देखो मनहि विचार॥३१॥
उच्च स्थान नगर विच देषि। तहां जिन मंदिर परम विशेष॥
कीजे भूमि सोधि करि रही। अस्थि चर्म भूतल जहां नहीं॥३२॥
जल बालुका सिलादिक जहां। होय तले न कीजिये तहां॥
तब ते शिल्पि शास्त्र सुविचारि। करत भये तिस ही परकार॥३३॥
शुभ दिन लगुन महूरत पाय। जिन मन्दिर की नीम दिवाय॥
अति ही दीर्घ विफल दृढ़ जानि। गाढ़वि निर्मित सिला पखानि॥३४॥
फटिक शिला की भीति मनोग्य। ऊँची सरस लसे शुभयोग॥
वैडूरज मनि मय जिसु थंभ। भवि जन मन लषि धरत अचंभ॥३५॥
ऊपर जासु सिखिर वहु बनै। तिन पर कलश लसत बहु घने॥
पंच वरण मणि मय द्युति वंत। इन्द्र धनुष की छवि धारंत॥३६॥
तिन पर लसति पताका भूरि। भवि जन पाय करैं जे दूरि॥
मनि मय दंड अग्र लगि रही। गगन पवन वस हालति सही॥३७॥
चहुंदिशि से आरोपित जेह। भविनि बुलावत है मनु तेह॥
मधुर शब्द किंकिन वाजंति। जिनि रवि सुनि वीणा लाजंति॥३८॥
टंकोत्कीर्ण विहंगम रूप। विविधि भांति देषियत अनूप॥
जहां श्री मंडफ लसत विशाल। बुध जन चित्त हरन दर हाल॥३६॥
दरवाजे चहुं दिशि में चार। मनिमय तोरण युत मनिहार॥
सजल वावड़ी हैं जसु पास। कमल प्रफुल्लित मधुकर वास॥४०॥
मधुर नीर भरि पूरित तोय। हंस चक्र तक सोभित जोय॥

वेदी तासु लसति अति जोर। तिस वापी की चारों ओर॥४१॥
तिस मंदिर बाहिर भुवि घेरि। फटिक कोट वेढ़्यो चहुं फेरि॥
गौपुर चारि चहूँ दिशि जासु। कंचन मय पर सुत ओकास॥४२॥
उपमा रहित कूट संयुक्त। एक सहस संख्या जिन उक्त॥
छत्र श्रय भामंडल जहां। दर्पण कमल चमरगण तहां॥४३॥
अर भृंगारादिक उपकर्ण। लसत चंदोवे बहु विधि वर्ण॥
मुक्त माल लटकें तहां भूरि। रत्न जडित मकरे जे दूरि॥४४॥
गंध कुटी शोभा कहाँ गहै। यह जिन विंव रतनमय रहै॥
दक्ष पुरुष निरमापित जेह। शुभ लक्षण लक्षित अति नेह॥४५॥
तहां वरांग नृप इक दिन आय। निरखि जिनालय मन हरषाय॥
रोम २ आनंद्यो गात। उमग्यो प्रेम न हिये समात॥४६॥
सजल नयन मुख गदगद वानि। थुति करतो नृपसो गुनखानि॥
तहां परोक्ष जिन गुण पढ़ि पाठ। स्तोत्र नाम सहस्त्र अरु आठ॥४७
गद्य पद्य स्तुति पढ़ि नृप सोय। तहांतें निकसि सो बाहिर होय॥
मंत्री सेठिजु पास बुलाय। कहो वचन तिन सों समुझाय॥४८॥
च्यारि संघ एकत्र कराय। आनंद भेरि देउ वजवाय॥
यती अर्जिका श्रावक जानि। श्रावकनी वृत धरि वहु मानि॥४६
उत्सव विंव प्रतिष्ठा काज। पत्री लिखि भेजो तुम आज॥
सुनि मंत्री नृप वचन प्रमान। करि हिरदे धरि वहु गुण खानि॥५०
विंव प्रतिष्ठा करि अनुराग। पूजा द्रव्य लेय वड़ भाग॥
दस विधि द्रव्य सुगंध मंगाय। कुंकुम चंदन मलय सुभाय॥ ५१
कर पूरादि सुगध अनेक। विविध भाँति लं सहित विवेक॥
नाना विधि वर वस्त्र मनोग। इंद्रोपक आदिक जे जोग॥५२॥
सब सामिग्री करि इक ठोरि। जे जिनज्ञ जोग हैं और॥

भूपति अति उदार चित होय। यज्ञ विधान रचौ तिन सोय॥५३॥
बिंब प्रतिष्ठा करो जुरीति । करि आचारज हित चित प्रीति॥
पाठ प्रतिष्ठा सार जु देषि। सो सब रीति करी जु विशेष॥५४॥
कछुक विशेष कहो इह ठाम । सुनिये सो थिर करि परनाम॥
गाय वजोय शिखिर पर जाय । सुजन समेत जु मन हरषाय॥५५॥
खानि शिखिर तहां पूज कराय । विधिपूर्वक पाषान हि ल्याय॥
टंकोरकीर्णक कारक जेह । तिन सनमान दान करि नेह॥५६॥
वस्त्राभूषन तिनि पहिराय । शुद्ध नीर तन धौत सुभाय॥
इस विधि प्रति निर्मापन करै । जिसमें तन आलस नहि धरै॥५७॥
याही विधि के ते निरमापि। प्रतिमा शुद्ध थान थिर थापि॥
प्राशुक जल अस्नान कराय । गंगादिक तीरथ जल लाय॥५८॥
पुनि आकार सुध्यादिक कर्म । करि आचारज जिन प्रति पर्म॥
शुभ दिन लग्न महूरत साधि । पंच परम पद कों आराधि॥५९
तिलकौषधि करि तिलक जुकरो। बिंब लिलाट मध्य अनुसरो॥
ये आचारज गुण गण लीन । बिंब प्रतिष्ठा परम प्रवीन॥६०॥
तिन करि कें कीनी सब रीति । निश्चै धारि धर्म में प्रीति॥
नयनोन्मीलन पुनि विधि ठान। सार प्रतिष्ठा लखि मन आन॥६१
पुनि अष्टाधिक कलस बनाय । कनक रतन मय सहस सुभाय॥
सुरसरि आदि सलिल भरिल्याय। तिन जिन बिंब स्नान करवाय॥६२
पाछे जिन पूजन आचर्यो । शांतिक होय आदि विस्तर्यो॥
ये भवि देश देश के आय। सब मिलि उत्सव किये हरषाय॥६३
मधुर गीत वादित्र अपार । नर्तकी नृत्य करें अधिकार॥
मङ्गल गान कल्यान जु होय। घर घर नगर लोग सब कोय॥६४॥
नाचत नारी नर हरषाय । पुर आनर्त सार्थ है भाय॥

तिस पीछे वरांग नृप सोय। करि अस्नान शुद्ध तन होय॥६५॥
धौत वस्त्र भूषित आभरण। लागो श्रीजिन पूजा करण॥
ता रानी आदिक ले लार। पूजा द्रव्य ल्याय भरि थार॥६ ॥
पुनि जिन मुनि समूह नमिराज। स्तुति करतो नृप भक्ति जिहाज॥
मुनि मुखतें सो धर्म नरेश। दीननु दान देय सु महेश॥६७॥
संतोषित करि कें सो भूप। परमानंद लह्यो सुख रूप॥
सो अनुपमा नारि नृप जोय।उत्सव करि कृतार्थ चित होय॥६८॥
पुनि प्रभावना अंग निमित्त। रथ यात्र कीनी शुभ चित्त॥
मन एकांत पक्ष विच दक्ष। विद्या मद माते जिमि अक्ष॥६९॥
नैयायिक सौगत इत्यादि। ये प्रचंड मद गर्वित वादि॥
राज सभा विच आये येह। श्रीजिन भव बाधक जित तेह॥७०॥
तिन सर्वहुन जीत्यो नर पाल। स्याद्वादि विधि करि तिहि काल॥
मन वांछित भोगत वर भोग।पंच विषय गोचर शुभ योग॥७१॥
सो बहु काल गमावतु भयो। धर्म करत धन साधत भयो॥
पुत्र अनूपम जायो एक। लक्षण युत गुण जासु अनेक॥७२॥
बाल भानु द्युति धरत न जाहि। शुभ दिन लगन महूरत मांहि॥
भविजन संवर कमल दिनेश। जन मन आनन्द करन विशेष॥७३॥
नाम सुमन्त धर्‍यो नृप जासु। कहि महिमा वरने कवि तासु॥
सकल कलागम कुशल निदान।नव यौवन धारतु गुनवान॥७४॥
रूप जासु नारी मन हरन। सकल सुपरिजन आनंद करन॥
लज्जा युत व्याही नृप सुता। ये सुशील वृत धरि गुन युता॥७५॥

॥ कवित्त ॥

यह शुभ गोत्र सुगात्र पवित्र लहैं, सु विभूति सदा सुखकारी।
शील निधान अरु विद्या की खानि, धरैं उर ज्ञान अनेक प्रकारी।

राज विभूति त्रिया सुत सूति करें, करतुति परो दुखहारी ।
रूप मनोहर यामें ते ही जिन पूरव पुन्य कियो अति भारी॥७६॥
पायो है ज्ञान अपूर्व जिनों जिन, कीर्ति तिहुं जग छाय गयी है ।
या भव कानन की भ्रमना तजि, सास्वति मुक्ति वधू परनी है ॥
सादर सेव करें तिन की जन भूरि, महा गुनवान वेई हैं ।
ज्यों चिरकाल सुभोगिन भोग, लह्यो वैराग्य सो धन्य तेई हैं॥७७॥

इति श्री वरांग चरित्रे श्री वर्धमान भट्टारक कवि रचिते तस्य भाषायां वरांगस्य सिद्धायतन निरमापित जिन प्रतिष्ठा करण वर्णन नाम द्वादशमः सर्ग समाप्त किया ॥१२॥

अथ तेरहवां सर्ग ।

कवित्त ॥२३॥

एक समें निशि सोय अंग सु जागि उठ्यो निज सेज के मांहीं ।
छीन भई तन नींद सबै मन में इम चिंततु है उहि ठांहीं ॥
दो घड़ि रात्रि रही जब ही तब दीपक जोति सो मन्द परांही ।
कारन ज्यों ही भयो नृप कों सुविराग विचार नओ कछु नाहीं ॥१॥
स्नेह घटो दुति छीन भई इस दीपक की जग रीति यही है ।
आयु घटे जब देह लटे तन की द्युति नेकहुं नाहि रही है ॥
रोग जरा दुख व्यापि रहे तन में सुख शांति ने राह गही है ।
तू चित चेततु क्यों न अबै जड़ सों करि प्रीति कहूँ निबही है ॥२॥
ये भव भोग वियोग भरे थिर आयुष यौवन राज नही है ।
क्लेश सहस्रनु साधित जाहि सु तो छिन में पर होत सही है ॥
हैं जु अनित्य सबै जग में दृग देखत देखत जात यही है ।
झूठे ही प्रीति करों जग सों तिनकी कछु बातनि जाति कही है ॥३॥
वारि तरंग रमा इव चंचल समै समै प्रति नाश है जाको ।
आयुष यौवन रूप मनोहर नदी प्रवाह बढ़ो नहिं थाको ॥
एक महूरत जिमि चंचलतामें कहा सुख को अभिलाषों ।
यो जग रीति पिछानि के चेतन तूं सुख आस करे भयो राको ॥४॥
एक कबहूँ कि दीरघ आयु लही सुरलोक में जाय के देव भयो तू ।
तहां सुरांगनि में सुख भोगि अनेक प्रकार तहां तें चल्यो जू ॥
या पृथवी तल में पुनि आय के पुन्य उदै पद राज्य लयो तू ।
भूलि रहो विषयासुख में जु अतृप्ति भयो मरि नर्क गयो जू ॥५॥
तहां महा दुख भोगे अपार सुपंच प्रकार निरंतर भाई ॥

छेदन भेदन सूल को रोपन आदिक मोप कहे नहिं जाई ॥
युद्ध करावत हैं असुरासर जाय तहां दुख देत अघाई।
या विधि के दुख भोगि चतुर्गति या भव राज विभूति तें पाई॥६॥
ज्यों सारितान के नीरि से सागर तृप्ति न होत सदा जल सदा पूरो॥
त्यों भव के सुख पाय अनेकनु भांतिनु के दुख सो नहिं दूरो॥
होत है तूं चितु अवें फिरि ओसरु ना कह्यो मानि ले मेरो।
जैसे कृशानुन तृप्ति लहैं विच डारियो ज्यो तिस भूरि सो कूरो॥७
तीनि हूँ लोक में सूर बडे जिनके बल को नहिं पार लह्यो है।
हैं जु महर्द्धिक दीरघ आयु के धार कहू यम कंठ गह्यो है॥
स्वर्ग सुरेश्वर भूमि नरेश्वर को उन जा जम घात सह्यो है।
तू चित चेततु क्यों नहिं बावरे क्या लखि या जग भूलि रह्यो है॥८॥
जो विधि के वशनें इह जन्म में पायो है दुख अनेक प्रकारी।
हय हरनादिक भीलन के वश ग्राह गह्यों पग मों विच वारी॥
पुन्य उदें तहां ते निकस्यो पुनि सेठ सों संग भयो दुख हारी।
नारि वरांग वरी जु तहां नृप की दुहिता गुन रूप अपारी॥९॥
पूरी परो भव के सुख भोगतें जो जग में दुख कारन जे हैं।
राग विरोध तज्यों वर वोध भज्यो निज भाव नहीं कुछ भै हैं॥
सो इम चिंततु अंतर के घट में तजि आलस कर्म नसेहैं॥
सेज को त्याग उठो तब हीं सब ही विधि संजम साज सजे हैं॥१०॥

दोहा॥

करि प्रभात संध्या तबै, गयो तात के पास।
धर्मसेनि नृप सभा विच बैठ्यो जहां सुख वास॥११॥

पद्धड़ी छंद॥

तहां करि प्रनाम पितु चरन दोय। तिन अग्र भूमि थित भयो सोय॥

छिन मौन होय थिति करि वरांग। कहि राज कथा इक२ प्रसंग॥१२
फुनि उठि करि युग धारि शीस। अब सरलहि अरज करतु सुधीस॥
निज मन वंछित पूरण सुकाज। करतो मन में चिंततु इलाज॥१३
सो कहतु भयो पितु सों सुबैन। जिन सुनत श्रवण अति दुःख देन॥
हे नाथ तुम्हारे पद प्रसाद। आबाल काल तें तजि विषाद॥१४॥
पाई विभूति वांछित विशाल। भोगे सुख सब ऋतु के त्रिकाल॥
विन जनित सबै सोय भई सिद्धि। तुम चरन सेव ते रिद्धि वृद्धि॥१५
तुम्हरे प्रसाद तें जगत माहि। मन वांछित सब पूरे सुआहि॥
सद्धर्म मार्ग विच गमन धारि। हों प्रगट भयो जग तिहुं मंझारि॥१६
अब ग्रह परिग्रह सब त्यागि तात। वांछतु मुनि मुद्रा धरन गात॥
दीजे आयसु मुहि करि प्रसाद। जिह बिन है मानुष जन्म वादि॥१७
मन वांछितमो करिये अवार। अब और न कछु कीजे विचार॥१८

॥ सोरठा ॥

मुनि वरांग के बैन, तात नृपति उत्तरु दियो।
नाम जासु धर्मसैन, कहतु एम तासों तबै॥

॥ चालि छंद ॥

सुत राखन प्रान हमारे। यह वचन कहो कहा प्यारे॥
सब जन मन को दुखकारो। होय सुनत जाहि वे करारी॥१९॥
तुम गये तपोवन माही। सब राज्य नाश हुइ जाही॥
मोहि सहित मात तुम नारी। दुख सहि न सकें यह भारी॥२०॥
ग्रह रहिं न सके कोई तुम विन। पग धर न सके कोई तुम विन॥
तुम स्वजन प्रजा रख वाले। रिपु गढ़ के जीतन हारे॥२१॥
तुम हो सुत कुल के कर्त्ता। तुम दीन दुखी जन भर्ता॥
तुम धरा भार के धारी। अन्यायनि कों भयकारी॥२२॥
तुम हो निकलंक शरीरा। निर्मल चारित धरि धीरा॥

तुम सो सुत कला निवासा : उत्तम जन पूरण आशा ॥
सब जन रक्षा कर तारा । सब जन सिरु धारन भारा ॥
दो०—एम प्रशंसा करि तबै, पुत्र प्रेम करि तात ।
कहतु भयो तासों तबै, दृग युग नीर बहात ॥२४॥

चौपाई ।

पुत्र करो गृह वसि वर धर्म । शुद्ध भाव पालो षट कर्म ॥
देव पूजि नित दीजै दान । गुरु पद सेवन संयम ज्ञान॥२५॥
शक्ति सहित तप करि वर वीर । ये षट कर्म साधिये धीर ॥
पाय सहाय गृहस्थिहि धर्म । अनागार तपु करते परम॥२६॥
तातें भासि कर्म वसु दहे । मुक्ति पुरी सुख मारग गहे ॥
तातें ग्रहस्थ धर्म में भजो। अवरु सकल मन की भ्रम तजो॥२७॥
तुम शरीर तप जोग्य न आहि । तप को समैं अबै है नाहिं ॥
कछू काल ग्रह वसि बन जाय। तप कीजो मुनि ध्यान धराय।२८॥

॥ सोरठा ॥

कहतु भयो इमि बानि, सुनि वरांग नृप तात सों ।
भव भ्रमतें जिय जानि, कौन कौन दुख नाश है ॥२९॥

॥ योगी रासा छंद की चालि ॥

इस संसार असार खोर विच भ्रमण करत जिय मोरे ।
को को मात पिता नहिं हुये ते सब ही मैं छोरे ॥
उत्तम मध्यम कुल विच जनम्यों मरों न के के बोरा ।
काज अकाज कर्यो न कहां कहां भुगते दुख अपारा ॥३०॥
सुर नर बाल युवान वृद्ध वय अल्प रिद्धि के धारी ।
एके जीव सदाँ भव भटकै धरि धरि रूप अपारी ॥
जब तक काय शिथिल नहीं होवे इन्द्रिय तेज घटे ना ।
तब तक देह जरा नहिं व्यापे जब तक सुधि विसरे ना ॥

तब तक काज करे नर तप के पावै शिव सुख चेना॥३१॥

॥ दोहा ॥

दृढ़ व्रत तप धरने विषैं, जानि वरांगहि तात ॥
उत्तरु कछु नहि दे सकौ, शिथिल भयो अति गात॥३३॥

॥ चौपाई ॥

यह सुगात्र पोता तुम आहि। तुम करि पालन करिये जाहि ॥
मो पर छिमा करो सब लोक। भूपादिक मन्त्रीजन थोक॥३४॥
इम कहि पकर्‌यो मौन वरांग। दीक्षा इच्छा करि एकांग ॥
ताके आगे क्षण स्थित होय। श्री धर्मसेन नृपति वर जोय॥३५॥
सभा साखि दे दिय तिस राज। नाम सुगात्र पौत्र गुण भ्राज ॥

॥ अडिल्ल छंद ॥

तब वरांग संभाषण करि सब सों सही।
सब की आज्ञा लेय क्षमा करि गुण मही॥
बांधव जननी भार्या मोह निवारि के।
तिनितें वांछा छोड़ि सुचित्त विचारि के॥३६॥
सागर वृद्धादिक आश्वासन करि तबै।
तप धरने चित उद्यम करतु भयो जबै॥
मुकट हार आदिक भूषण तन सोहतो।
बरन २ के बस्त्र पहिर मन मोहनो॥३७॥
कनक मई शिविका आरूढ़ सु होय के।
भक्ति हेत सब जन के मन भ्रम खोय के॥
क्षीर बरन युग चमर दुरत सिर जासु के।
चले संग नृप प्रजा मात्य जन तासु के॥३८॥
वंदी जन थुति पढ़त दान तिनु देत है॥

वाजन बाजत मंगल गान समेत है।
स्वेत छत्र सिरु धरे पताका फरहरें ॥
शोभा सहित विभूति चल्यो तपु के बरें॥३६॥
जाय विपिन विच जहां वरदत्त गनेश है।
नेमीश्वर के भविनु देत उपदेश है ॥४०॥

दोहा ॥

पालकी परतें उतरि तब, चरण गमन करि सोय ।
और नृपति बहु साथ जिस,पहुंच्यो मुनि ढिंग सोय ॥४१॥

चौपाई ।

हे प्रभु भवसागर जिय दीन। उछरत गिरत सदां जिमि मीन ॥
कहुं सुर पुर कहुं नर्क मंझार। भ्रमण करत नित बारम्बार॥४२॥
मिथ्या तम व्यापतु जिस नेन। भटकत फिर्यो बीच दुख फेन ॥
सहतु कष्ट नाना विधि तहां। दुष्ट कर्म झख बस परि जहां॥४४॥
मन अन्तरगत गुफा मंझार। जाकें क्रोध लोभ अधिकार ॥
माया मोह महा तम भर्यो। तातें शिव मग सुधि बीसर्यो॥४५॥
तुम उपदेश दिये बिनु सोय। क्यों करि नाश तासु को होय ॥
दोष रहित तत्वारथ सार। तुम मुखतें न सुनों इक वार॥४६॥
तुम भाषित श्रुत मारग एव। सो तब देत सिद्धि स्वयमेव ॥
सुनि गण धर वरांग के बैन। कहत भये वच शिव सुख दैन॥४७॥
ता नृप सों हित कर चितु ल्याय। करुना धारन वे मुनिराय ॥
विन दीक्षा न सफल चारित्र। नगन रूप को करन पवित्र॥४८॥
चारित्र विनु कर्मनि को नास। विन क्षयकर्म न शिव सुखवास॥
तातें निज हित करो तुरंत। अपनो वांछित पूरो संत॥४६॥
इम आज्ञा गनधर की पाय। वस्त्राभूषन त्यागि सुभाय ॥

छांड़ि परिग्रह द्विविध नरेश। जात रूप धार्यौ वर भेस॥५०॥
जो संसार ताप दुख करन। सो परिग्रह छांड़ो गुण धरन॥
पंच मुष्टि शिर केश उपाड़ि। बैठ्यो वेद आसन तहां माड़ि॥५१
हुओ शिष्य गणधर को राय। शल्य तीन तजि के थिर काय॥
तिस पीछें राजा ये और। दीक्षा धरत भये तिस ठौर॥५२॥
क्षण भंगुर विभूति निज जानि। सुहित करन विराग मन आनि॥
सागर वृद्ध नाम यो साहु। ताहू के हिय बढ़ो उमाहु॥५३॥
मार्यो मोह काम वस कियो। नृप वरांग संग मुनि वृत लियो॥
मंत्री अजित सेनि सुर सैनि। दीक्षा धारत भये सुख देन॥५४॥
निर्मल मानस दोऊ प्रवीन। शिव सुख भोगनि में चित दीन॥
राज वरांग त्रिया जे सबै। एक वस्त्र धार्यो तिन तबै॥५५॥
अवनी नाम अर्जिका पास। धारयो तप तिन होय उदास॥
धर्म प्रभावन रखि बहु लोक। सुरुचि धार चित तजि दुख शोक॥
श्रावक धर्म ग्रहनि तिन करयो। किनहुं न और भाव उर धरयो॥
धर्मसेन आदिक भूपाल। गुण वरांग सुमिरत निहि काल॥५७॥
पलटि आय पुर पहुंचे सबै। अस्तुति करें वरांग की जबै॥
तिस पीछे वे गुणी मुनिराय। दस विधि धर्म कह्यो समुझाय॥५८
मुनि वरांग आदिक भव जीव। तिन हित ये वांछिते सदीव॥
गुप्ति समिति व्रत भेद विचारि। त्रय पुनि पंच पंच निरधार॥५९
तेरह विधि चारित्र मुनि भांखि। श्री जिन वानी की करि साखि॥
षट अनायतन अरु त्रय शल्य। इन आदिक दोषनु मन दल्य॥६०॥
सामायक आवश्यक कर्म। षट विधि भेद कहे जिन धर्म॥
ए संसार नाश करि जानि। इन पालनि करिये चितु आनि॥६१
दोष पचीस कषाय जु कहे। तिनि के भेद भिन्न वरणये॥

सो सुनिये मनमें धरि ध्यान। तिनिको त्याग करो सुचि आनि।६२॥
क्रोध मान माया अरु लोभ । ये तन मन उपजावन चोभ ॥
चारि चारि चारोंके जानि । सब मिल षोड़श भये निदान॥६३॥
अनंतानुबंधी जो चोकरी । अप्रत्याख्यानी जु उच्चरी ॥
दूजी तीजी प्रत्याख्यानि । चौथी संज्वलनी पहिचानि॥६४॥
षोड़श नव मिलि भये पचीस । ये क्रम करि भाखे जगदीश॥
नौ कषाय इनहैं जिन भेव । भिन्न२ तिनहूँ सुनि ले॰ ॥६५॥
हास्य अरति रति युत दुख शोक, भय अरु ग्लानि भयो मिलि थोक।
नौहू को यह जानि स्वरूप । इन त्यागन कीजे गुन कूप॥६७॥
पंच भेद मिथ्यातहि त्यागि । पंच संसार नाश अनुरागि ॥
कर्म एक पुनि द्विविध बताय। द्रव्य भाव करि दिय समुझाय।६७॥
पुनि वसु भेद जासु वर नये । ज्ञानावरनादिक करि भये ॥
पुनि वसु चारि एक क्रम जानि। अंक वाम गति ते पहिचान।६८॥
इस विधि भेद करम को कह्यो । बंद उदय इनको वरणयो ॥
बड़ो बुद्धि के धारक जेह । तिनि के वचन तने सुनि लेह॥६६॥
इनके नाश करन के काज । बहु विधि व्रत पालन गुन आज॥
मुनि मुद्रा धरि तप विधि साजि। मोह शत्रु जीत्यो गल गाजि।७०॥
आरत रौद्र दोय दुरध्यान। धर्म सकल शुभ कहे बखानि ॥
तिर्यंक नरक दुःख करि दोय। धर्म सुकल तें शुभ गति होय ७१॥
सप्त तत्व षट द्रव्य सुजानि। फुनि पंचास्ति कायसु बखानि॥
नव पद युत इन सबको भेद। जानि सुनिश्चय करि तिन खेद।७२॥
ध्यावे अंतष्करन मंझार । पावे तब भव दधि को पार ॥

अडिल्ल ॥

यह विधि धर्म यतीश्वर मुनि को भाषियो ।

मुनि वरांग नव संयत तिस रस चाखियो ॥
हृदे धारि पद प्रनमि गणाधिक के तवे ।
थविर योगि गण निकट जाय बैठे तवे ॥७३॥
अनशनादि तपु तपत द्विषट् विधि भावसों ।
कृश शरीर निज करयो मुक्ति सुख चावसों ॥
सो वरांग मुनि सम दम अंमृत पान के ।
महा वीर्य धर होतु भयो भ्रम भानि के ॥७४॥
सूर्य किरण करि तप्त सिला तल हैं जहां ।
गिरि शिर ऊपर जाय ध्यान धरतो तहां ॥
कठिन कांकरी कोटि तृणाकुल भूमि में ।
करत विहार वरांग मुनीश्वर तिहि समैं ॥७५॥
विहरतु पथिकानन विच जहां दिनकर छिपे ।
रात्रि होत थिर थान एक लहि तपु तपै ॥
काय विसर्जन आसन गहि दृढ़ होय कें ।
देवन हूं करि अचल होतु मद खोय कें ॥७६॥

कवित्त सवैया ॥३१॥

पावस में गार्जे घन दामिनी दमंके जहां,
सुर चाप गगन सुबीच देखियतु है ।
नाग सिंह आदि वन जंतु भय करें जहां,
कंपित सुपादप पवन पेखियतु है ॥
चंहु वोर जल के प्रवाह वहैं भूमि तल,
मारगन पंथिनु के लखे लेखियतु है ॥
निरंतर वृष्टि करैं जलद अगम नीर,
तलु तलें खड़े मुनि तन सोषियतु है ।
(इति वर्षा वर्णनं) ॥१॥

मकर की राशि गत भनो भानु जब,
शिशिर ऋतु आई सीत बाधा भूरि भरनी।
हिम कन दाहैं तरु कोमल सकल दल,
वहे झंझावात गात करे थरहरनी ।
वन वास करें मुनि ध्यान धरें केतो,
सरवर के तीर के तो जाय तीर थरनी ।
पाथर से लगे जहाँ तन की सकति कहाँ,
तहाँ मुनिराज करें कर्म वसु जरनी ॥
(इति शिशिर ऋतु वर्णनं) ॥२॥
ग्रीषम की रितु संतापित जहाँ शिला पीठ,
पवन प्रचारु चारि दिशा में न जा सकें ।
सूखि गयो सर वर नीर और नदी जल,
मृगन के यूथ वन दौड़ें फिरें प्यास में।
जलाभास देषियतु दूरितें सुथल जहाँ,
जाम युग घाम तेज करेऊं अवास में ॥
गुफा तल सलिल सहाय छाड़ि धीर मुनि,
गिरि के शिषिर योग माड़ि बैठे ता समें॥
॥३॥(इति वर्षा ऋतु वर्णनं) ॥२३॥
सवैया तेईसा ॥ २३ ॥
चतुर्थ षष्ट अष्टम पक्ष सुमास उपवास करें मुनि भारी ।
पूरव पाप निवारण कारन घोर वीर तप करें वन चारी ॥
ओरु यती जिन के पद वंदित शिष्य समान महा व्रत धारी।
जे निर वांछक देह सुभोग भवावलि तें समतासु बिहारी॥
करत अहार सदा इक वार सु छयालीस दूषन टारि के जोई।
श्रावक के ग्रह आयकें वे मुनि काय के हेत निरीहक होई॥

सो तप के बढ़वारि के कारण इन्द्रिय पांचनु कों जु विगोई ॥
अक्षय सौख्य सुसिद्धि के हेत वरांग गुनी मन मैल को धोई॥५॥
बाह्याभ्यंतर द्वादश भेद तपें तप सोषत गात सदां हीं ॥
सघन भयानक कानन वे मुनि आतम लीन खड़े इक ठांहीं॥
धारि कें कायोत्सर्गहि ध्यान सु लांबी करी जिनने युग बांहीं ॥
मानहु भव्य उधारन कारन या भव कूप तें पार करांहीं॥६॥
यों तब घोर तपो जु महा मुनि सो अब क्यों करिकें वरि नैये॥
मैं मतिमंद महा जड़ धी अब ताकों कहो कैसे पार सु पैये ॥
श्री महाराज ऋषीश्वर तें तिनके चरणों युग शीश नवैये ॥
जातें महाव्रत प्रापति होय हमें हूँ सदां तिनके गुन गैये॥७॥

॥ गीति का छंद ॥

जिस अखिल कर्म प्रबन्ध छूटो पाप नाश।सु होत ही ॥
फुनि सुकृत बाढ़ो ध्यान माड़ो अरु सम्यक उदोत हीं ॥
मिथ्यात् को पुनि नाश होते ध्यान शुभ उरधरत ही ॥
लेश्या विशुद्ध परगट भई झट पट करम वन जरत ही॥८॥
सो मुनि वरांग सु आयु क्षय तें त्यागि प्रान सु देह को ॥
सर्वार्थ सिद्धि गये तवैं यह विगत सुर त्रिय नेह।को ॥
यह सब समान सु इन्द्र हैं फुनि हीन अधिक न कोउ जहां ॥
षट द्रव्य चरचा करत जहां तैंतीस सागर थिति तहां॥९॥
तन एक हस्त प्रमान जहां आहार मनहि विचार हैं ॥
तहां मास षोडश अर्ध युत वीते यहैं निरधार है ॥
तहां निःप्रवीचारक महा सुख भोगते त्रिय रहित जे ॥
सप्तम नरक लग विक्रियावधि धरन गुन करि सहित ये॥१०॥

॥ अडिल्ल ॥

राज ऋषीश्वर समुद्र वृद्धि आदिक जिते ।
घोर वीर तप करि आयुष क्षय तेहि ते ॥
संयम सहित सन्यास माड़ि तन त्यागि कें ।
सुरग गये आतमा ध्यान में लागि कें ॥
ये वरांग की नारि संयम वृत पालि के ।
हुय विराग अति चित्त सुशील सम्हारि के ॥
मरण समाधिहि ठानि हानि कर कर्म की ।
गई तेऊ सब स्वर्ग धुरा धरि धर्म की॥१२।

यो नर मिथ्यात त्यागि धरे उर समकित विपति परे हू
ताके करै दुख वासना ॥
पाप वन खंडन जो कर्म कों विहंडन है गुन गण मंडन सो जिन
वैन सासना ॥
पावे राज पद फुनि छूटे गेह जासु होय निहचे वरांग सम लहे
सो सुखासना ॥
जहे जानि भवि जन धारो उर समकित बैठो जाय मुक्तिपुरी
वीच पद्मासना॥१३॥

अडिल्ल ।

मंद बुद्धि मो करिके चरित कियो यहे ।
श्री वरांगजी को जु पढे जो सरदहे ॥
पंच कल्यानक लहि तिन सुर गुण गाय हैं ।
ते निर्मल धी मोक्ष महा सुख पाय हैं॥१४॥

गीता छन्द ॥

श्री मूल संघ भुवन प्रगट गुन वलात कार नाम है ।

भारती गच्छ लसे सु जहां निज गुनन करि अभिराम है ॥
तहां सकल गुन निधि वर्धमान सुनाम भट्टारक भये ।
नित कह्यो चरित वरांग नृप को शुद्ध तिहँ जगतो जये॥१५॥

दोहा ॥

मंगल करन जिनेश युग, चरण कमल तिहु काल ।
चारि संघ भवि जनन को, कमल नयन दुख टाल ॥१६॥

इति श्रीमत भट्टारक वर्धमान विरचिते श्री वरांग चरित्रे तस्य भाषायां श्री वरांगस्य सर्वार्थ सिद्धि गमनं नाम त्रयोदश संधि समाप्तम् ॥

दोहा ॥

जाति बुढ़ेले वंश जदु, मैनपुरी सुख वास ॥
नगरा वार कहावते, कासिप गोत सु नास ॥ . ॥
नंदराम एक साहु तहां, पुर वासिन सिर मोर ।
हे हरचंद सुदास तहां, वैद्य किया धर ओर ॥२॥
तिन ही के सुत दोय हैं, भाखें तिनके नाम ।
चिति पति दूजे कंज दृग, धरें भाव उर साम ॥ ३॥
लघु सुत की भी यह कथो, भाषा करि चितु ल्याय ।
मंगल कारी भविनु को, हूजे सब सुखदाय ॥४॥

कवित्त तेईसा ॥२३॥

एक समें घरतें चलि के वर वास कियो जु पिराग मझारी ।
हींगामल सुत लालजीत सों तहाँ धर्म सनेह बढ़ो अधिकारी ॥
तहां तिनि को उपदेशहि पाय के कीनी कथा रुचि सों सुविचारी ।
होय सदा सब कों सुख दायक राज बरांग की कीरति भारी ॥५॥

दोहा ।

संवत नव दूने सही, सतक उपरि पुनि भाखि ।
युगम सप्त दोऊ धरि, अंक वाम गति साखि ॥६॥
इह विधि सव गनि लीजिये, करि विचारि मन वीच ।
जेठ सुदी पूनो दिवस, पूरन करि तिह खीच ॥७॥

॥ १६६८ मिती मारग शुक्ला ७ चन्द्र वासरे ॥